तब व्याकुल हो ब्रह्मा जी ने ध्यान पूर्वक यह सब रहस्य जाना। तब उनने कमल केसर बने सूक्ष्म कवच द्वारा उन दोनों को नाभि से ऊपर शरीर को बाँध दिया और मन्त्रों का पाठ करने लगे।

उसी समय मन्त्र जपते समय ब्रह्मा का एक इन्दुवदना, पद्म सुन्दरी, प्रिय दर्शना, कमल हाथ में धारण किये हुये, एक कन्या उत्पन्न हुई। उसे देखकर दोनों दैत्यों के प्राण सूख गये। तब ब्रह्मा ने उस कन्या से मधुर शब्दों में कहा-हे यथार्थ सुन्दरि! तुम कौन हो! मैं तुम्हें क्या समझूँ? उस कन्या ने वेद विधि से ब्रह्मा जी की पूजा की और हाथ जोड़कर ब्रह्मा जो बोली-मुझे आप भगवान विष्णु की आज्ञाकारिण मोहिनी माया समझो। हे ब्रह्मन! आपने मेरा स्मरण किया था इसलिये मैं शीघ्र यहां आई हूं।

यह सुनकर ब्रह्मा जी ने उसका नाम महाव्याहृति रखा। और कहा-तुम मेरे शिर को भेदन करके उत्पन्न हुई हो अतः तुम्हारा नाम सावित्री है। नैकांशातु हो ने से आपका नाम अनेकांशा भी होगा। हे सुमुखि! ये तुम्हारे गौण नाम होंगे। किन्तु हमारे प्रसाद से तुम्हारे कर्मानुसार असंख्य नाम होंगे।

इधर वे दोनों दैत्य युद्ध करते थक गये और उन दोनों ने विष्णु जिष्णु से वह दान मांगा कि आप हमें आप खुले स्थान में मारे तथा आप हमारे पुत्र हो। तथस्तु कहकर विष्णु ने कैटभ को यमलोक पहुँचा दिया। और मधु को जिष्णु ने मार दिया। इस प्रकार विष्णु जिष्णु के द्वारा उन दैत्यों का बध होने पर ब्रह्मा जी प्रसन्न हुये और संसार की हितकामना में लग गये।

इसके बाद जिस प्रकार ईश्वर ने पुत्र रूप में आत्मदान किया, अब मैं इसका वर्णन करुँगा। विष्णु जिष्णु के साथ मधु कैटभ की लड़ाई खत्म होगई, जब ब्रह्माजी विष्णु जी से कहने लगे कि आज सौ वर्ष पूरे होगये। और वह समय भी आगया है। आप इस घोर संप्लव को हटालें। हम भी अपने निवास स्थान को जारहे हैं। ब्रह्माजी के इस प्रकार कहने पर विष्णु जी इस घोर संप्लव को हटादिया

और भूमि को स्थावरविहीन करके जंगलों को स्थिति कर दिया। इसके बाद फिर ब्रह्माजी बोले हे श्रीपति वैकुंठनाथ! आपका कल्याण हो। आपने समुद्र को शीघ्र ही सीमित कर दिया। अब आप हमें बताइये कि हम आपका कौनसा प्रिय कार्य करें?

श्रीविष्णु जी बोले–हे प्रजापति ब्रह्माजी! अब आप हमारी बात ध्यान पूर्वक सुनिये। आपने पुत्र की इच्छा करके जो श्री शिवजी से वरदान प्राप्त किया है उसे सफल कीजिये और कर्जा से मुक्त होजाइये। आप चारों तरह की सृष्टि पैदा कीजिये और उनका संहार कीजिये।

प्रजापति ब्रह्माजी भगवान से ज्ञान प्राप्त करके प्रजा की सृष्टि करने के लिये कठिन तपस्या करने लगे। इस प्रकार बहुत वर्ष तपस्या करने के बाद भी कुछ असर नहीं हुआ तब प्रजापति ब्रह्माजी को दुःख हुआ। उस समय उनकी क्रोधमयी आंखों से आंसू निकल पड़े। उन आंसुओं से वात पित्तकफात्मक महाविषधारी सांप उत्पन्न हुये। वे सर्प बड़े २ फन वाले थे। सबसे पहले सर्पों को ही पैदा होते देखकर ब्रह्मा जी मन में ग्लानि करने लगे कि इतनी कठिन तपस्या करने बाद भी शुरू में मैंने लोक विनाश करने वाले जीवों की उत्पत्ति की। उन्हें क्रोध के कारण मूर्छा आगयी और मूर्छित अवस्था में ही उन्होंने अपने प्राण छोड़ दिये। इसके बाद प्रजापति ब्रह्माजी के शरीर से दयावश रोते हुये एक ग्यारह रुद्र पैदा होगये। रोने के कारण ही वे रुद्र कहलाये। और उनको रुद्रत्व प्राप्त हुआ। जो रुद्र हैं वे ही प्राण हैं जो प्राण हैं वे ही रुद्र हैं। प्राणधारी सभी भूतों में वे ही प्राणरूप से स्थिति हैं। प्रजापति ब्रह्माजी के सिर से ग्यारह रुद्र पैदा होने के बाद श्री कैलाशपति महादेव जी ने उन्हें फिर जीवित कर दिया। नील लोहित श्री गौरीपति शंकर जी ने ब्रह्माजी को जीवित किया और जीवित होने के बाद ब्रह्माजी से कहने लगे कि हे भगवान अपने को याद करिये और हमसे याचना कीजिये और रुद्र को अपना पुत्र समझिये, हम पर प्रसन्न होइये। तब अपनी मन की इच्छा के अनुकूल शब्दों को सुनकर प्रजापति ब्रह्माजी बहुत खुश हुये। उनकी

दोनों आंखें खिलते हुये कमल की तरह खिलगये। तेजराशि प्रभु प्रजापति ब्रह्मा जी ने अपने जीवित होने के बाद अति गम्भीर वाणी में कहा कि हे ईश्वर! आप कौन हैं, जो हमारे मन को अधिक आनन्दमय कर रहे हैं? आप ग्यारह रूप हैं और विश्वमूर्ति की तरह विद्यमान हैं। आप हमें ठीक ठीक बताइये। अत्यन्त देदीप्यमान प्रभु ब्रह्मा जी के इस तरह कहने पर श्री रुद्र भगवान अपने ग्यारह रूपों के साथ उनको प्रणाम करके कहने लगे। कि आपने हमसे श्री विष्णु जी के साथ जो वर माँगा था कि हे भगवान! आप हमारे सुयोग्य पुत्र बनें। हम आप से विश्वास पूर्वक कहते हैं। हम आपके लोक प्रसिद्ध पुत्रों की तरह आपका कार्य पूरा करेगें। अतः हे भगवान अब आप दुख को छोड़ दीजिये और संसार की सृष्टि करने के लिये तत्पर्य हो इये।

श्री कैलाशपति शिवजी की बातों को सुन कर प्रभु प्रजापति ब्रह्मा अत्यन्त खुश हो गये और श्री शिवजी से कहने लगे कि हे भगवान आप हमारी मदद कीजिये और हमारे साथ संसार की सृष्टि कीजिये। आप निखिल भूत और संसार के कारण हैं। अतः आप इस हमारे काम के लिये तैयार हो जाइये और तब श्री शिवजी ने "ऐसा ही हो" कह कर श्री ब्रह्मा जी की बात को स्वीकार कर लिया इसके बाद ब्रह्मा जी ने काले हिरन की खाल से विभूषित हो कर पहले मन को फिर भूतों की धारणा को और इसके बाद जीभ पर स्थिति रहने वाली विश्वरूपिणी सरस्वती को उत्पन्न किया। फिर इस के बाद भृगु, अंगिरा, दक्ष, पुलस्त्य, पुलह, क्रातु वशिष्ठ इत्यादि सात तेजस्वी मानस पुत्रों को उत्पन्न किया। इसके बाद और अपनी तरह के बहुत से संसार के कर्त्ता पुत्रों को उत्पन्न किया और फिर उनके मुँह से गाथों को पैदा किया। उसके ऊँकार प्रमुख वेद और उनके घमंड़ी देवता पैदा हुये। प्रजपति ब्रह्मा पहले दक्ष इत्यादि सातों मानस पुत्रों से कहने लगे कि "आपका मगलमय हो। आप सब श्री गौरीपति भगवन शिव के साथ मिल कर संसार की उत्पत्ति करें।' उन लोगों

के इस तरह कहने पर भगवान शिव ने उन मानस पुत्रों से कहा कि हे 'ब्रह्माजी के मानस पुत्रो ! आप में जो अग्रज हैं, वे हमसे प्राण धारण कर और ब्रह्माजी के पुत्रों को साथ लेकर सातों लोकों की सृष्टि करिये। आप सब हमारे कहने से ऐसा कर सकते हैं। आप सब का भला हो।' इन वचनों को सुनकर मानस पुत्रों ने श्री त्रिशूल धारी शिवजी से कहा। हे भगवान ! जैसा आप कहते हैं वैसा ही होगा। और इस तरह मानस पुत्रों ने श्री शिवजी से आज्ञा लेकर श्रीमान दक्ष से कहा कि 'आप ही सबसे उत्तम प्रजापति हैं। आपकी जय हो। सबसे पहले आप ही हमारे साथ प्रजा की सृष्टि करिये।' तब श्री दक्ष ने भी ऐसा ही हो कहकर उनके वचनों का पालन किया और उन लोगों के साथ मिलकर सृष्टि की इच्छा करने वाले प्रजापति मानस पुत्रों ने सृष्टि करना शुरू किया। भगवान शिव को इस तरह सृष्टि कार्य में तैयार होते देखकर प्रजापति ब्रह्माजी भी सृष्टि करने लगे। सप्तम कल्प के अतीत होजाने पर तब तपोलोक के रहने वाले ऋभु और सनत्कुमार पैदा हुये। इसके बाद फिर ब्रह्माजी ने बहुत से मानस पुत्रों को पैदा किया।

इति श्री वायु महापुराण का मधुकैटभ की उत्पत्ति और विनाश नामक पच्चीसवां अध्याय समाप्त ॥२५॥

---

* छब्बीसवाँ अध्याय *

(स्वरोत्पत्ति निरूपण)

सूतजी बोले—हे भगवान ? आपने सब संसार के रहने वालों पर दया करके अनेकों संदेहात्मक गूढ़ों के विषय को बताया है। तथा अब हमें श्री शिवजी के अवतार के विषय में कुछ भ्रम होगया है। इसका क्या कारण है कि सब पूर्व युगों को छोड़कर शिवजी ने कलियुग में अवतार लिया। भगवान ! इस वैवस्वत मन्वन्तर के प्राप्त होने पर वे क्यों अवतार लेते हैं। हमको आप यह बताइये, हम यह जानना चाहते हैं।

लोमश ऋषि बोले—उनके इस तरह पूछने पर संसार के कल्याण कर्त्ता श्री वायुदेव कहने लगे कि 'गाधेय' आप जो इस कथा को पूछ रहे हैं वह अत्यन्त गुप्त कथा है। अब हम उसको विस्तार पूर्वक कहेंगे, उसे आप ध्यान लगाकर सुनिये। सबसे पहले हजार वर्ष तक संसार एकार्णवाकार था, तब संसार की सृष्टि करने की इच्छा से प्रजापति ब्रह्माजी अत्यन्त दुखी होकर चिन्ता करते ही उनके एक पुत्र पैदा हुआ। वह दिव्य गन्धी और सुधापेक्षी था, जो दिव्य श्रुति का शब्द उच्चारण कर रहा था। प्रजापति ब्रह्माजी ने तब अशब्द स्पर्शरूपा अगन्धा और रसवर्जिता श्रुति का उच्चारण करके उसे प्राप्त किया। फिर वे ध्यान में मग्न होकर कठिन तपस्या करने लगे और चिन्ता में व्यक्त होकर कहने लगे कि यह कुमार कौन है? और इसके द्वारा यह उच्चारित त्रिमूर्ति क्या है? उनके चिन्ता व्यक्त करते ही शब्द स्पर्श रूपरस गन्ध रहित अक्षर उत्पन्न हुआ। इसके बाद फिर प्रजापति ब्रह्माजी ने लोक में अक्षर और अपनी मूर्ति का दर्शन किया। ध्यान में मग्न फिर ब्रह्माजी ने देखा कि देवस्वरूप अक्षर श्वेत कृष्ण रक्त और पीत हैं और वह न स्त्री है न नपुंसक है। उन पूरे अक्षरों को अच्छी तरह जानकर ब्रह्माजी चिन्ता कर रहे थे कि उनके कण्ठ से एकमात्र, महाघोष, सुनिर्मल, श्वेत वर्ण अक्षर प्रकट हुआ। वही अक्षर ऊँकार, वेद या साक्षात महेश्वर था। भगवान स्वयम्भू फिर अक्षर विषयक चिन्ता करने लगे। तब एक लाल रक्त अक्षर पैदा हुआ। यही रक्त अक्षर आदि देवता और ऋग्वेद का आदि मन्त्र 'अग्निमीले पुरोहितम' कहलाता है। इस सृष्टि के होनेसे बाद फिर प्रजापति ब्रह्माजी चिन्ता करने लगे कि यह क्या है? प्रभु प्रजापति ब्रह्माजी के चिन्ता करने से फिर ईश्वर सम्पन्न द्विमात्र श्रीशंकर जी पैदा हुये। फिर ब्रह्माजी द्विमात्र अक्षर सम्बन्धी चिन्ता करने लगे, तब ऋक्-छन्दयुक्तरक्ताक्षर यजुः पैदा हुआ। जिसके शुरू में 'इषेत्वो' इत्यादि मन्त्र है। ऋग्वेद एक मात्रा है और यजुः द्विमात्रा है।

इस के बाद फिर उस वेद और अक्षर को देख कर प्रजापति ब्रह्मा जी त्रिमात्राक्षर की चिन्ता करने लगे और फिर ब्रह्मा जी के चिन्ता करने से ऊँकार उत्पन्न हुआ। इसके बाद फिर ब्रह्मा जी उस अविनाशी ओंकर अक्षर की चिन्ता करने लगे। इसके बाद फिर ब्रह्मा जी ने एक पीतऋचा को उत्पन्न किया। तब पितामह ने वेद को निकट देख कर ब्रह्मासंक्षप्त त्रिवर्णात्मक ऊँकार का त्रिसंध्य ध्यान करनेलगे। यह ऊँकार रूप अक्षर तीन वर्णों के संयोग से होने के कारण त्रिवर्ण, लक्ष्यालक्ष्य प्रदृश्य, संहित, त्रिक, त्रिमात्रा, त्रिपद, त्रियोग और शाश्वत है। इसीलिये पितामह ब्रह्मा जी फिर उसी की चिन्ता करने लगे। प्रजापति ब्रह्मा जी ने उस तेजोराशि आत्मरूप ऊँकाराक्षर को चौदह मुंह वाला देखा। शुरू में उन्होंने ऊँकार को बनाया, इसीकारण से इनका नाम स्वम्यभू पड़ा। इसके बाद फिर प्रजापति ब्रह्मा जी के चारों मुखों से तरह तरह के वर्ण के चौदह स्वर और आद्य दिव्य अक्षर पैदा हुये। ये सब वर्ण अकार से प्रकट हुये हैं और इन वर्णों की संख्या तिरेसठ है। प्रजापति ब्रह्मा जी ने जिन साधारण वर्णों को देखा उनके शुरू में वे आकार रूप से स्थिति हुये और वही पहला अक्षर हुआ। इसके बाद फिर उन चौदहों स्वरों में मन्वत्राधीपति द्विव्य प्रधान चौदह मनु पैदा हुये। अकार हीचतुर्दश मुख वाला ब्रह्म ब्रह्मकल्प सर्ववर्ण और प्रजापति के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्रजापति ब्रह्मा जी के मुख से पहले स्वायम्भुवमनु पैदा हुये येस्वम्भू के अकार स्वरूप हैं और इसी तरह दूसरे मुख से अकार रूप स्वरोचिष मनु पैदा हुये ये पाराडुर वर्ण के हैं। इसके बाद उनके तीसरे मुख से इकार पैदा हुआ। इसको यजुः श्रेष्ठ यजुर्मय आदित्य स्वरूप और यजुर्वेद कहते हैं। इकार मनु स्वरूप है। यह रक्तवर्ण का है। इसके बाद फिर प्रजापति के चौथे मुख से उकार शब्द पैदा हुआ यह ताम्र वर्ण का है और मनु तामस कहलाता है। इनके पाँचवे मुख से ऊकार पैदा हुआ। यह पीत वर्ण का है और इन मनुओं को वरिष्णु कहते हैं इनके छटे मुख से कपिल वर्ण ऊकार पदा हुआ। यह वरिष्ट विजयमनु कहाते हैं। सातवें मुखसे कृष्ण वर्ण ऋक

स्वरूप वैवस्वत मनु पैदा हुये। प्रजापति के आठवें मुख से श्याम वर्ण ऋकारात्मक सावर्ण मनु पैदा हुए। ये श्यामाक्षर कहलाते हैं। इनके नवें मुख से नौवां लृकार पैदा हुआ। यह धूम्र वर्ण का है। और इन मनुओं को भी धूम्र कहते हैं। इनके दसवें मुख से लृकार पैदा हुआ। यह भी लृकार की तरह धूम्र वर्ण का है। और सावर्णक मनु कहलाता है। और फिर प्रजापति के ग्यारहवें मुख से विशंग वर्ण एकार पैदा हुआ, और वर्ण के अनुसार पिशंगी मनु कहलाये। इनके बारहवें मुख से पिशंग वर्ण और भस्म के समान एकार पैदा हुआ अतः ये पिशंगी मनु कहलाये तेरहवें मुख से पंच वर्ण से युक्त उत्तम वर्ण ऊँकार पैदा हुआ और मनु उत्तम कहलाये। इनके चौदहवें मुख से कर्बुर वर्ण ऊंकार पैदा हुआ। और मनु सावर्ण कहलाये। कल्प २ में इसी तरह मनु और स्वर वर्ण का ऐसा ही रूप रहता है। जो स्वर और वर्ण के अनुसार यथातत्व को जानने योग्य हैं। क्योंकि ये स्वर आपस में समान वर्ण के अनुसार हैं। अतः इसीलिये वर्ण की बराबरी के कारण उनका आपस में अन्वय होता है और हर एक कल्पों में इनका समान आकार और वर्ण होता है। इस प्रजालोक में सब सन्धियाँ सवर्ण होती हैं।

इति श्री वायु महापुराण का स्वरोत्पत्ति नामक छब्बीसवां अध्याय समाप्त।

* सत्ताईसवाँ अध्याय *

(महादेवजी के शरीर का वर्णन)

ऋषि बोले–हे सूतजी 'आपने जो इस कल्प में आचार्यवान ऋषियों के साथ शिव का रुद्र रूप से प्रकट होना बताया है उसे कहिये

सूतजी बोले–हे ऋषियों मैंने आपको यह कथा छोटे रूप में बताई है। अब हम विस्तार सहित श्री भगवान रुद्र के नामों को उनके अलग अलग शरीरों के साथ कहूँगा। अष्टम कल्प के बीत जाने पर शंकर जी अपनी स्त्रियों के साथ पुत्रों को जिस कल्प में पैदा किया, अब उसका वर्णन सुनिये। कल्प के शुरू में लोकपितामह ने अपनी आत्मा के समान तेजस्वी पुत्र नीलवर्ण कुमार को पाया।

तब उन प्रजापति ब्रह्मा जी ने अपने तेज से उस कुमार को जला दिया, और जला करके घोर और सुर बना दिया। फिर प्रजापति ब्रह्मा जी ने उस नीलवर्ण कुमार को रोते देखकर उससे पूछा कि तुम क्यों रोते हो, तब वह नीलवर्ण बालक कहने लगा कि पिताजी आप हमारा पहले नाम करण संस्कार किजिये। उस कुमार के शब्दों को सुनकर प्रजापति ब्रह्मा जी ने उससे कहा कि तुम्हारा नाम होगा। वह फिर रोने लगा और कहने लगा कि मेरा कोई दूसरा नाम रखिये। यह सुनकर पितामह ने दूसरा नाम 'भव' रखा। फिर वह रोने लगा तब ब्रह्मा बोले कि अब तुम क्यों रोते हो। तब कुमार ने अपना तीसरा नाम रखने के लिए कहा। यह सुनकर ब्रह्मा जी बोले कि तुम्हारा तीसरा नाम 'शिव' होगा उसके फिर रोने पर ब्रह्मा जी ने पूछा कि अब क्यों रो रहे हो? तब वह बालक कहने लगा कि मेरा चौथा नाम रखिए। तब प्रजापति ब्रह्माजी कहने लगे कि तुम्हारा चौथा नाम पशुपति होगा।

चौथा नाम रखने पर भी वह रोने लगा। उसको इस प्रकार फिर रोते हुए देखकर ब्रह्मा जी ने पुनः रोने का कारण पूछा तब वह बोला- मेरा पाँचवां नाम रखिए। इस पर ब्रह्माजी ने कहा हे देव! तुम्हारा पांचवां नाम ईश होगा। फिर रोकर वह कहने लगा कि अब मेरा छटा नाम रखिये। ब्रह्मा जी ने कहा- देव, तुम्हारा छटा नाम भीम होगा। छटा नाम सुनकर भी वह रोता ही रहा। फिर ब्रह्माजी ने कहा अब तुम क्यों रो रहे हो। तब उसने कहा कि मेरा आप सातवां नाम और रखिये। ब्रह्माजी बोले–अच्छा, हे देव, आपका सातवां नाम उग्र होगा। सातवां नाम सुनकर भी वह रोता रहा तब ब्रह्माजी ने पूछा अब क्यों रोते हो। वह पुनः बोला मेरा आठवां नाम और रखिए। तब ब्रह्माजी बोले–हे देव आपका आठवां नाम महादेव होगा।

इस प्रकार आठ नामों को ब्रह्माजी से सुनकर भगवान नील लोहित शंकरजी ने ब्रह्माजी से फिर कहा आप इन आठों नामों का स्थान भी बता इये तब उन्होंने सूर्य,पृथ्वी,जल,अग्नि,वायु,आकाश,दीक्षित ब्राह्मण, और चन्द्रमा की आठ मूर्तियों की सृष्टि की ये मूर्तियां ब्रह्माका ही नीलरूप हैं

जो इनमें रुद्र की वन्दना या पूजा करते हैं। भगवान रुद्र उनकी हिंसा नहीं करते। ब्रह्माजी ने कहा कि आपका दूसरा नाम भव है। अतः दूसरा शरीर भव होगा। जल से सम्पूर्ण प्राणी उत्पन्न होते हैं जल में मल मूत्र नहीं त्यागना चाहिए। न थूकना चाहिये न मैथुन करना चाहिये। नग्न होकर स्नान नहीं करना चाहिए और न शिर स्नान ही करे। स्थिर या बहते हुए जल के लिए कोई अप्रीतिकर बात भी नहीं करे। पवित्र या अपवित्र शरीर के स्पर्श से जल कभी दूषित नहीं होता है। लेकिन मटमैला, विरसा, दुर्गन्धमय थोड़ जल को काम में नहीं लाना चाहिये। बहते हुए जल को रोकना नहीं चाहिए क्योंकि वह समुद्र में जाना चहता है और समुद्र जल का उद्गम स्थान है इस प्रकार जो जल को जानकर जल में रहता है उसकी 'भव' सदा रक्षा करते हैं उसकी हिंसा नहीं करते, ब्रह्मा जी बोले– आपका तीसरा स्थान भूमि है जहां आप तीसरे नाम 'शर्व' से कहे जाकर निवास करेंगे। ज्ञानवान व्यक्ति को स्वच्छ स्थान में, छाया में, मलमूत्र का त्याग नहीं करना चाहिये। पहले पृथ्वी को शिर नवाकर प्रणाम करे फिर घास फूँस बिछाकर मल मूत्र को त्यागे। ऐसे आचरण वाले की शर्व कभी हिंसा नहीं करते। फिर ब्रह्मा जी ने कहा कि हे प्रभो आपका चौथा नाम ईशान है। उस चौथे शरीर की चौथी मूर्ति वायु होगी। ऐसा कहते ही भगवान में प्राण अपान आदिक पँच वायु प्रवेश कर गये। जो विराट स्वरूप वायु की स्तुति करते हैं उनकी ईशान भगवान हिंसा नहीं करते। ब्रह्मा ने पुनः कहा कि आपके पांचवें नाम पशुपति की पांचमी मूर्ति अग्नि है। ऐसा उनके कहते ही अग्नि उनके शरीर के तेज में प्रवेश कर गया। तब से उनका अग्नि का नाम भी पशुपति पड़ गया। चन्द्रमा सोम कहलाता है उसकी आत्मा ओषधियां हैं।

जो विद्वान लोग इस तत्व को प्रत्येक पर्व के दिन हृदय में धारण करते हैं उनकी महादेव जी सदा रक्षा करते हैं कभी हिंसा नही करते इसलिए महादेव जी की वन्दना करनी चाहिए। जिससे परम

कल्याण होता है। सूर्य (आदित्य) दिन में और रात में चन्द्रमा प्रजा की रक्षा करते हैं। सूर्य चन्द्रमा जिस रात को एक ही स्थान पर निवास करते हैं उसको अमावस्या कहते हैं। अमावस्या को योग युक्त होकर रहना चाहिये। क्योंकि ब्रह्म में नाम रूप के साथ सारा जगत व्याप्त है। वही अकेले सूर्य और चन्द्रमा कहलाते हैं। प्रजागण सूर्य के प्रकाश रूपी नेत्र से देखते हैं तथा सहदेव सूर्य के मध्य स्थित होकर किरणों से जल को सींचते हैं। जो शरीर प्राण के साथ भूतों के शरीर में निवास करता है वही भगवान रुद्र की वायु रूप ईशानी मूर्ति कहलाती है। यज्ञ में दीक्षित ब्रह्मवादी ब्राह्मणों की वृत्ति उनकी उग्रमूर्ति है। उनका उग्र शरीर यजमान का रूप ही है। भगवान महादेव की अमृत आत्मा जलमय चन्द्रदेव कहे गये हैं।

रौद्र नाम वाले प्रभु की पत्नि सुवर्चला है और पुत्र शनिश्चर कहे गये हैं। जलात्मकभव वाले शरीर की पत्नि को ऊषा कहा गया है उसका पुत्र उशना कहा गया है। शर्वनाम की मूर्ति का नाम भूमि है उनकी पत्नि विकेशी है और पुत्र का नाम अंगारक (मंगल) है। ईशान भगवान की पत्नि का नाम शिवा है। उनका पुत्र मनोजव है। पाशुपत नामक अग्नि की पत्नि स्वाहा है उनका पुत्र स्कन्द है। आकाश रूप भीम की पत्नि दिशायें हैं और स्वर्ग उनका पुत्र है। ब्राह्मणों से पूज्य उग्र नामक शरीर की पत्नि रोहिणी है उसका पुत्र बुध कहा है। इस प्रकार ये भगवान के नाम और शरीरों का वर्णन किया गया है। ये सब शरीर पूजनीय और नमस्कार करने योग्य हैं। पृथ्वी, जल, तेज सूर्य, चन्द्रमा, व्योम और दीक्षित ब्राह्मण, वायु रूपी इन महादेव जी के प्रति जो जन भक्ति भाव प्रकट करता है वह निश्चय ही प्रजावान होता है। वही शिव सायुज्य को भी प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार मैंने यह आप लोगों को महान यश को देने वाला, गोपनीय शिव तत्व कहा इसके फल से मनुष्यों और चौपायों का मंगल हो। इन नामों के साथ आपको महादेव जी के शरीरों का भी वर्णन किया। अब इसके बाद मैं भृगुवंश का वर्णन करूँगा।

इति श्री वायु महापुराण का महादेव जी के शरीरों के वर्णन नामका सत्ताईसवां अध्याय समाप्त ॥२७॥

अट्ठाईसवाँ अध्याय

ऋषियों के वंश का निरूपण

सूतजी बोले—भृगु के द्वारा ख्याति के गर्भ से दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनका नाम धाता और विधाता था। वे दोनों सुख दुख के स्वामी, असहाय प्राणियों को शुभाशुभ देखने वाले, और मन्वन्तर विहारी थे। उन्ही की एक लोक भाविनी जेष्ठा बहिन भी थी जिसका नाम श्री देवी था। वह श्री देवी नारायण को पत्नि रूप से प्राप्त हुई। उससे नारायण के बल और उत्साह नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये। इसके अलावा इस श्री देवी के वे सभी मानसपुत्र हैं जो द्विव्यचारी हैं और जो पुण्यात्माओं के लिए देवताओं के विमानों के चालक हैं।

धाता और विधाता को आयति और नियति नामक दो प्रसिद्ध कन्यायें व्याहीं थीं। उनसे उन्हें पाण्डु और मृकण्डु नामक सनातन ब्रह्मकोष रूप दो पुत्र उत्पन्न हुये। वे दोनों दृढ़व्रती थे। मृकण्डु से मनस्वनि के गर्भ में मार्कण्डेय जी का जन्म हुआ था। मार्कण्डेय के मूर्धन्या से वेदशिरा नामक पुत्र हुआ। फिर वेदशिरा को पीवरी के गर्भ से अनेकों पुत्र जो वंश को बढ़ाने वाले थे उत्पन्न हुए। वे सभी मार्कण्डेय नाम से प्रसिद्ध हैं तथा ये सभी वेद पारंगत ऋषि हैं।

पाण्डु के पुण्डरीका के गर्भ से द्युतिमान, द्युतिमन्त और सूरजवान नामक तीन पुत्र हुए। उनके बीच द्युतिमन्त और सूरजवान के पुत्र पोत्रों ने भार्गवों से परस्पर सम्बन्ध स्थापति किया।

अब स्वायंभुव मनु के बाद मरीचि के वंश का विस्तार से वर्णन करुंगा। मरीचि के सम्भूति नामक पति से एक पुत्र 'पूर्णमास' और कुष्टि, तुष्टि, त्विषा और अपचीति नामक चार कन्यायें उत्पन्न हुई। पूर्णमास के सरस्वती के गर्भ से विरज और पर्वस नामक दो पुत्र हुये। विरज के सुधामा नामक विद्वान पुत्र उत्पन्न हुआ। पर्वस के लोकपाल होने पर पर्वसा के गर्भ से यज्ञवास और कश्यप नामक धर्म निर्णायक और वंश को बढ़ाने वाले दो पुत्र उत्पन्न हुये।

अङ्गिरा ने स्मृति के गर्भ से भरताग्नि और कतिमान नामक

दो पुत्र उत्पन्न हुए। सिनवाली, कुहू, राका और अनुमति चार कन्यायें भी उत्पन्न हुयीं अग्नि के संहती से पर्जन्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। कीर्तिमान ने धेनुका से वरिष्ठ और धृतिमान नामक दो पुत्रों को पैदा किया। वे दोनों ही आंगिरस श्रेष्ठ थे। इनकोसहस्रों पुत्र और पौत्र प्राप्त हुए।

अत्रि के अनुसूया से पांच पुत्र और एक कन्या 'श्रुति' नामक हुई। यह श्रुति शंखपाद की माता और प्रजापति कर्दम ऋषि की पत्नि थी। अनसूया के पांच पुत्रों का नाम सत्यनेत्र, हव्य, अरोमूर्ति शनीश्चर, और सोम थे। याक के बीत जाने पर ये पांचों भी अत्रि के वंशधर भी लुप्त हो गए।

प्रगति के गर्भ से पुयस्त्य को दत्तालि नामक पुत्र प्राप्त हुआ ये ही स्वायंभुव मनु के मन्वन्तर में पूर्व जन्म में अगस्त्य थे उनके देवबाहु और विनीत नामक दो भाई थे। इनकी छोटी बहिन सद्वती अग्नि को व्याही थी और पर्जन्य की माता थी। पुलस्त्य के बड़े पुत्र का नाम दत्तालि था दत्तालि ने अपनी पत्नि में सुजंघ आदि बहुत से पुत्र पैदा किये जो स्वायंभुव मन्वन्तर में पौलस्त्य नाम से प्रसिद्ध थे। पुलह प्रजापति की पत्नी क्षमा से अनेक पुत्र उत्पन्न हुये। उनके नाम कर्दम, अम्बरीष और सहिष्णु आदि थे ये बड़े कीर्तिवान और अग्नि के समान तेजस्वी थे।

कर्दम की पत्नी अत्रिऋषि की पुत्री श्रुति थी, उसने शंखपाद पुत्र और काम्या नामक पुत्री को जन्म दिया। यही लोकपाल श्री मान प्रजापति शंखपाद, अपनी भीर्गनी काम्या को प्रियव्रत से विवाह करके दक्षिण दिशा की तरफ चले गये। प्रियव्रत के काम्या से दस पुत्र पैदा हुये और दो कन्यायें भी हुयीं। उन्हीं दस पुत्रों से क्षात्रकुल की वृद्धि हुई। ऋतु को शृतु तुल्य पुत्र प्राप्त हुआ जो उसके वंश को बढ़ाने वाला हुआ। ये सभी ऊर्ध्वरेता थे इनके न भार्या थी न पुत्र ही थे। ये ही साठ हजार बालखिल्य ऋषि कहलाते हैं ये दिवाकर सूर्य को घेर कर अरुण के आगे २ स्तुति करके चलते हैं।

और प्रलय पर्यन्त सूर्य के साथ रहते हैं। इनकी दो बहिनें पुण्या और आत्म सुमति वाली और थीं जा छोटी थीं। ये दोनों ही पूर्ण मास के पुत्र पर्वस की पुत्र बधुयें थीं।

वाशिष्ठ के अर्जा के गर्भ से सात बेटे और एक पुत्री उत्पन्न हुई। पुत्री का नाम 'पुण्डरीका' था। वह धुतिमान की माता तथा पाण्डु की प्रिय पत्नि थी। इसाके गर्भ से विख्यात सात वाशिष्ठ उत्पन्न हुये जो रज, पुत्र, अर्द्ध बाहु, सवन, अधन, सुतपा, और शुक्ल थे ये ही सप्तर्षि कहलाते हैं। मार्कण्डेय जी ने रजस से राजन्य, केतुमान और प्रजापति को उत्पन्न किया। इन्होंने प्रतीची दिशा में आश्रम प्राप्त किया। महात्मा वाशिष्ठ का वंश नाम के साथ २ स्वायंभुव मन्वन्तर में लोप होगया। अब अग्नि वंश का विस्तार सुनिये।

इति श्री वायुमहापुराण का ऋषि वंश वर्णन नामक २८ वां अध्याय समाप्त

---

* उन्तीसवाँ अध्याय *

(अग्नि वंश का वर्णन)

ब्रह्माजी के मानस पुत्र श्रीमान स्वायम्भुव मन के समय में और भी जो उनके क्रोधी मावस पुत्र अग्नि पैदा हुये। अतः अग्नि के द्वारा स्वाहा से तीन पुत्र पैदा हुये। पावक, पावमान और शुचि उनके नाम थे। मन्थन से निकली अग्नि को पवमान कहते हैं। सूर्यकिरण से निकली अग्नि शुचि कहलाती है तथा वैद्युत अग्नि को पावक कहते हैं। इनके रहने के स्थान भी ये ही हैं। पवमान के पुत्र का नाम कव्य वाहन था और पावक के पुत्र का नाम सहरक्ष था तथा शुचि के पुत्र का नाम हव्यवाह था। देवताओं के अग्नि हव्यवाहन हैं, पितरों की अग्नि कव्यवाहन है, तथा असुरों की अनि सहरक्ष है। अतः इस तरह इन तीनों की ये तीन अगनि हैं। इनके उनसास पुत्रादि हैं। अब इनकी कथाओं को अलग २ विस्तार से कहेंगे। सबसे पहले प्रजापति ब्रह्माजी के लौकिकाग्नि वैद्युत नाम के पुत्र पैदा हुये और इनके भी ब्रह्मोदनाग्नि नाम के पुत्र पैदा हुये, आगे चलकर जिनका नाम भरत हुआ

उनके तेज और जल केरस को काव्य रूप से वैश्वानर मुख कहते हैं। समुद्र के मथने से अमृत निकलने के बाद अथवर्ण नाम की अग्नि उत्पन्न हुई। अतः इन्हीं को अथर्वा लौकिकाग्नि कहते हैं। इनके पुत्र का नाम दध्यंग था। अथर्वा लौकिकाग्नि ही भृगु थे। और इनके पुत्र का नाम अगिरा था। अतः अंगिरा ही अथर्वा लौकिकाग्नि दध्यंग हैं। समुद्र के मथने से निकली अग्नि को ब्राह्मणों ने पवमान अग्नि बताई है और वही ग्रहस्थ अग्नि है। इस ग्रिअन के दो पुत्र हैं। पहले पुत्र का नाम आहवनीय अग्नि है। और दूसरे पुत्र का नाम शुकाग्नि है। शंस्य अग्नि से भा दो पुत्र पैदा हुये जिनके सभ्य और आवसथ्य नाम थे। ब्राह्मण जिस अगिन को आहवनीय हव्य वाहन अगिन कहते हैं। उसी शस्य अगिन ने अपनी इच्छा से सोलह नदियों को उत्पन्न किया उनके नाम ये हैं। कृष्णवैणी, काबेरी, नर्मदा, यमुना, गोदावरी वितस्वा, चन्द्रभागा, इरावती, विपाशा, कौशिकी, शतद्रु, सरयु, सीता, सरस्वती, हादिनी और पावनी इत्यादि नाम थे। इन सब नदियों में शंस्य अगिन ने अगग २ सोलह भागों में करके उन धीष्णियोंमें आसक्त हुये। स्वयं अगिन भी धीष्णय हैं। उनके साध्वी नदियों से बहुत से पुत्र पैदा हुये। जो धीष्णिय कहलाये। ऋतु प्रवाहया, अग्नीध्र और अपरापर धीष्णिगण, यज्ञ के दिनों में क्रमपूर्वक ठीक स्थान में स्थित होते हैं वह स्थान इन धीष्णियों से उत्पन्न जो नदी पुत्र अगिन हैं उनके बिहार करने के स्थान हैं। जिन अग्नियों के निवास स्थान का कुछ पता नहीं है अब हम उनका वर्णन करेंगे। कृशानु नाम की जो सब से बड़ी अग्नि है वे यज्ञ के उत्तर द्वितीय वेदी पर स्थित रहते हैं। सबसे बड़ी सम्राट अग्नि आठ तरह की होती है। जिनकी ब्राह्मण पूजा करते हैं। आठों तरह की अगिन में दूसरी अगिन का नाम पर्षन अग्नि है। ये वेदी के आधेभाग में स्थित रहती है। ग्रतद्वोच में नभनाम की अगिन चार नामों से स्थित रहते हैं। ब्रह्मज्योति वसु नाम की अगिन ब्रह्मस्थान में निवास करते हैं। हव्य और सूर्यादि अगिन शामित्र कर्म में स्थापित होते हैं। और समुद्राग्नि नाम की अग्नि ब्रह्मस्थान में स्थित रहते हैं।

ऋतुधामा सुज्योति अग्नि औदुम्बरी में स्थित रहते हैं। ब्रह्मज्योति वसु नाम की अग्नि ब्रह्मस्थान में स्थिति रहते हैं अजैकपाद नाम की अग्नि यज्ञशाला में स्थिति होते हैं। और अहिर्बुध्न अग्नि गृहपति नाम से प्रसिद्ध है। शंस्य के सभी पुत्र ब्राह्मणों द्वारा पूजित हैं अब हम विहरणीय अग्नि और उनके आठों पुत्रों की कथा का वर्णन करेंगे।

ऋतु, प्रवाहन, अग्नीध्र और वहां रहने वाले धीष्णीगण यज्ञ के दिनों में वहां सब क्रम से विहार करते हैं। उनके पुत्र हव्यवाहन अग्नि पैत्रेय कहलाते हैं शान्ति अग्नि प्रचेता कहे जाते हैं। सत्य द्वितीय अग्नि कहलाते हैं। विश्वेदेव नामक अग्नि ब्रह्म स्थान में स्थापित होते हैं। अचक्षु और अच्छावक अग्नि भूमि में स्थापित होते हैं। सवीर्य उशीराग्नि नेष्ठीय कहे जाते हैं आठवीं 'व्यरति' अग्नि मार्जालीय कहे जाते हैं। धिष्ण्य सौम्य और आज्य के विहार योग्य पावक नामक अग्नि जलराशि के गर्भ में ही कहलाती है। जो अग्नि जल में अच्छी तरह छुपे रहते हैं वे अवभृथ कहलाते हैं। इनके पुत्र का नाम हृच्छय अग्नि है, मनुष्यों के जठर में स्थित है जठराग्नि के पुत्र मन्यु-मान कहे गये हैं। भूतों के प्रभु और व्याप्त हैं। के पुत्र घोर संवर्तक हैं। ये बड़वामुख होकर समुद्र का जल पीते हैं। इन समुद्र में निवास करने वाले वड़वामुख के पुत्र को सहरक्ष गया कहा है। सहरक्ष के पुत्र का नाम क्षाम है,जो घरों में जलाने के लिये हैं। इनके पुत्र क्रव्याद् हैं, जो मरे हुये पुरुषों को जलाने के लिये हैं। ये सब पावक अग्नि के पुत्र हैं।

शुचि सौरि अग्नि, गन्धर्व और असुरों से अरणिमन्थन करने से प्रदीप्त हुये थे। आयु नामक भगवान अग्नि पशुओं के शरीर में निवास करते हैं। इनके पुत्र का नाम महिमान है। इनके पुत्र शावान हुये। जो अग्नि पाकयज्ञ में होते हैं वे 'सवन' नाम से पुकारे जाते हैं। सवन के पुत्र का नाम है 'अद्भुत'। अद्भुत के पुत्र को 'महा-विविच' कहा गया है। ये प्रायश्चित होम में हुत का भक्षण करते हैं। इन विविचि के पुत्र अर्क हैं और अर्क के पुत्र अनीकवान्, वासृजवान् रक्तोहा, पित्तकृत और सुरभि हैं। ये सब स्वर्ण के रंग में, सुरभि,

अगिन धन रत्नादि में ज्योति रूप से निवास करते हैं ये संख्या में १४ हैं और ये सब पवित्र अगिन की सन्तान हैं। इनको वह्नि भी कहा गया है और यज्ञ में काम आते हैं ये सभी बीते हुये स्वायम्भुवमनु के समय आदि सर्ग में याम देवों के साथ समाप्त होगये।

ये सब चेतन अचेतन सब प्राणियों में व्याप्त हैं। पूर्व मन्वन्तर के बीत जाने पर प्रथम मनु के समय में पुण्यवान याम देवों के साथ रहते थे। इसप्रकार मैंने यह स्थान धारियों का वर्णन किया। आने वाले तथा बीते हुये सभी काल में अगिनयों के लक्षण इसी प्रकार कहे गये हैं। ये सब तपस्वी, अवभृथ प्रजाओं के पति और ज्योतिष्मान हैं। स्वारोचिष मनु से लेकर सावर्णि मनु के समय तक सातों मन्वन्तर, ये अनेक प्रयोजनों से वर्तमान देवों के साथ निवास किया करते हैं। तथा अनागत अगिन अनागत देवों के साथ निवास करते हैं। इस तरह हमने अगिनयों का वर्णन किया अब पितृीश्वरों के वंश का वर्णन करेंगे।

इति श्री वायु महापुराण का अगिन वंश वर्णन नामक उन्तीसवां अध्याय समाप्त ॥

---

* तीसवाँ अध्याय *

(दक्षशाप वर्णन)

सूतजी बोले–प्रजापति ब्रह्माजी जब स्वायम्भुव मन्वतर में सबसे पहले प्रजा की सृष्टि करने लगे तो सबसे पहले जल की सृष्टि पैदा की, फिर देवताओं की, फिर राक्षसों की तथा फिर मनुष्यों की सृष्टि पैदा की। ब्रह्माजी से पितरों की उत्पत्ति हुई जो अपने पिता की ही तरह समझते थे। प्रजापति ब्रह्माजी ने देवताओं, असुरों और मनुष्यों को देखकर कहा कि हम तुम्हारे सभी के पिता के समान हैं। उसी समय छः ऋतुओं की उत्पत्ति हुई। इन्हीं ऋतुओ को पितर कहते हैं। वेदों का कथन है कि वसंत ऋतु पितृदेव हैं। ये पिरारमता पैदा होते हैं।

इनके अग्निष्वात्ता और वर्हिषत् नाम हैं। इनमें किसी के नाम गृह-मेधी और यज्ञ न करने वाले हैं। अग्नि से सम्बन्ध न रखने वाले अग्निष्वात्ता नाम के हैं। यज्वा और सोमपीथी हैं वे वर्हिषत् पितर आग्नहोत्री माने जाते हैं। शास्त्रों का कहना है कि ऋतुदेव ही पितृ-देव हैं चैत्र वैशाख रस, ज्येष्ठ अषाढ ग्रीष्म, श्रावण भादों जीव, क्वार कार्त्तिक सुधा, अगहन पौष मन्यु, माघ फाल्गुन घोर शिशिर माने जाते हैं। छःओं ऋतुओं की महीने के अनुरूप यही समय की स्थिति है। ये ऋतुगण चेतन और अचेतन कहे जाते हैं। ब्रह्माजी के अभि-मानी युग ऋतुदेव कहे जाते हैं। मास के आधे समय में ऋतुगण आर्तव रूप में बदल जाते हैं। और ठीक स्थान पर एक जगह होने के कारण स्थानाभिमानी कहे जाते हैं। मास, ऋतु, संवत्सर, अयन आदि अपनी स्थिति में अभिमानी काल के अंग हैं। निमेष, कला, काष्ठा मुहूर्त और रात दिन इत्यादि काल की स्थिति में स्थानाभिमानी कहे जाते हैं। वे उसी अवस्था में रहने के कारण उन्हीं के समान हैं। पर्व तिथि संध्या, शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष, निमेष, कला, काष्ठा, एक मास, मुहुर्त, तीन ऋतुओं का अयन, दो मास की एक ऋतु दक्षिण उत्तर भेद से दो अयन और संवतसर सुमेक माना गया है। ऋतुगण इन्हीं सुमेरु के पुत्र हैं जो कि आठ भागों में बटे हुये हैं त्रटतुओं के पांच पुत्र हैं जो आतव नाम से पुकारे जाते हैं। अतः सभी चर और अचर आर्तव से पैदा हुये हैं। इसीलिये उनके पिता आर्तव कहे जाते हैं और त्रटवुगण उनके पितामह के नाम से प्रसिद्ध हैं। सुमेक से जो प्रजा पैदा हुई वह सब मरगई, इसीलिये सुमेक मरी हुई प्रजा के प्रपितामह पुकार जाते हैं। ये एक जगह स्थिति रहने वाले हैं। इसी कारण से यह स्थानात्मक कहलाये जाते हैं। वे उसी रूप में रहने के कारण उन्हीं स्थानों के समान है। ब्रह्माजी ही संवत्सर हैं और संवत्सर ही अग्नि या त्रटतु कही गयी हैं। त्रटतु से त्रटतुओं का जन्म हुआ है। इसीलिये वे त्रटतु कहलाती हैं। मासों का छओं त्रटतुओं में प्रवेश होता है। अतः मास भी त्रटतु का ही रूप है। त्रटतुओं के

आर्तव नाम के पांच पुत्र हैं। द्विपद, चतुष्पद, पक्षी, सरीसर्प और स्थावरादि पांच भौतिकों का जो काल है, आर्तव कहलाता है। ऋतु और अतित्व पितृत्व कहे जाते हैं। अतः इसी से ऋतु और आर्तव पितर कहे जाते हैं। सब भूत ऋतुकाल में ऋतु और आर्तव से पैदा हुये हैं। इसीलिये पितर भी आर्तव कहे जाते हैं। सभी मन्वन्तरों में ये स्थानाभिमानी और कालाभिमानी नियम से स्थिति रहते हैं। अग्निष्वात्ता और वीहर्षद् नाम के दो तरह के पितर होते हैं। इन पितरों ने दो कन्याओं को पैदा किया। उनका नाम मेना और धारिणी था। इन्हीं दोनों कन्याओं से इस संसार की सृष्टि हुई, ब्रह्मवादिनी, आचर्यशील कन्याओंका पितरों ने धर्म के लिये दान कर दिया मैना अग्निष्वात्ता की मानस पुत्री थी और धारिणी वहिर्षद की मानस पुत्री थी। सोमपीथी वहिर्षद ने अपनी कन्या धारिणी का विवाह मेरु के साथ कर दिया और अग्निष्वात्ता ने अपनी कन्या मैना का विवाह हिमालय के साथ कर दिया। अब हम उनके पौत्रों की कथा का वर्णन करेंगे। हिमालय की पत्नि मैना से मैनाक नामक पुत्र पैदा हुआ। उसके गंगा नामक एक पुत्री भी पैदा हुई जो लवण सागर को व्याही गई थी। मैनाक के एक छोटा भाई भी था, जिसका क्रौंच नाम था। इसी के नाम पर क्रौंच द्वीप नगर बसा। मेरु की पत्नि धारिणी से मन्दार नाम का पुत्र पैदा हुआ इनके तीन कन्यायें भी पैदा हुई थी। जिनका नाम वेला, नियति और आयति था आयति का धाता के साथ विवाह कर दिया, और नियति का विधाता के साथ विवाह कर दिया। स्वयम्भुव मन्वन्तर में इनकी सन्तनों की कथा का वर्णन किया गया है। वेला का विवाह सागर के साथ कर दिया। उसके सागर से एक अति सुन्दर कन्या का जन्म हुआ। सागर ने उस कन्या का नाम सामुद्री रखा और उसका विवाह वर्हिष के साथ कर कर दिया। उस सामुद्री कन्या ने अपने पति से दस पुत्रों को पैदा किया। वे सभी अति पराक्रम शाली और विद्वान थे। वाचुक मनु के समय में त्रयम्बक के शाप से स्वायम्भुव दक्ष उनके पुत्ररूप में पैदा हुये।

शांशपायन बोले–हे सूतजी चाक्षुस मनु के समय में श्री शंकर जी के शाप से दक्ष प्रजापति किस तरह पैदा हुये अब आप हमें इसकी कथा का वर्णन सुनाइये।

सूतजी बोले–कि हे शांशपायन जी हम पहले ही कह चुके हैं कि दक्ष प्रजापति के आठ कन्यायें थीं, उनको अपने घर लाकर उनका आदर सत्कार किया। इस तरह आदर पाकर वह कन्यायें पिता के घर सुख पूर्वक रहने लगीं। दक्ष ने सबसे बड़ी पुत्री सती का विवाह श्री शंकर जी के साथ करदिया। लेकिन उसने सती को नहीं बुलाया, चूंकि दक्ष का और शिव जी का आपस में कुछ मनमुटाव था। इस मनमुटाव का यह कारण था कि किसी दिन श्री शंकरजी ने दक्ष को प्रणाम नहीं किया। यह देखकर दक्ष को बहुत बुरा लगा कि जमाई होकर भी ससुर को प्रणाम नहीं करते। भगवती सती को यह मालूम हुआ कि मेरी सभी बहिनें पीहर गई हैं, तो वह भी बिना बुलाये चली गई, लेकिन सती जी का वहां किसी ने आदर सत्कार नहीं किया तब क्रोध में आकर सतीजी ने अपने पिता से कहा कि हे पिता जी आप मेरी सब बहनों का तो बहुत आदर कररहे हैं और मेरा अपमान कर रहे हैं। मैं सब से बड़ी हूं और उत्तम हूँ। मैं अपमान करने योग्य नहीं हूँ यह सुन दक्ष प्रजापति क्रोध में आकर बोला कि यह मैं मानता हूं कि तू मेरी सबसे बड़ी और श्रेष्ठ आदर करने योग्य पुत्री है किन्तु और सब लड़कियों के पति बहुत अच्छे हैं। सब महादेव जी से अधिक विद्वान धार्मिक अत्यन्त गुणी और सब से श्रेष्ठ हैं। मेरे सातों जमाई अच्छे हैं। उनके नाम ये हैं। पुलस्त्य, वशिष्ठ, अंगिरा पुलह, क्रतु, भृगु और मरीचि इत्यादि। मेरी और महादेव जी की लड़ाई है और तू उन्हीं की सेवा करती है। इसी कारण से मैं तेरा आदर नहीं करता हूँ। अभिमानी दक्ष ने इस तरह सती जी से कहा। यह सुनते ही सती जी ने क्रोधित होकर अपने पिता से कहा कि मैं मन कर्म और वचन से पवित्र हूँ फिर भी आप मेरा अनादर करते हैं इसी कारण मैं अपना यह शरीर भी त्याग देती हूँ पिता के

अपमान करने से सती जी को बड़ा दुख हुआ और वह मन ही मन श्री शिवजी को प्रणाम करके कहने लगीकि जबभी मैं कहीं जन्म लूँगी ऐसे पवित्र शुभ कर्म करूँगी कि सब जन्मों में श्री शिवजी ही पति मिलें। अतः इस तरह कहकर सतीजी वहीं पर योगासन लगाकर बैठ गईं और अपने पवित्र मन से अग्नि स्थापित करके वहीं पर जलकर भस्म हो गईं। श्री शिवजो ने यह सुना कि सतीजी ने अपना शरीर त्याग दिया तो वह सब ऋषियों और दक्ष पर बहुत क्रोधित हुये और उन्होंने दक्ष से कह कि हे दक्ष तूने जिस कारण मेरे लिये सतीजी का अनादर किया और दूसरी अपनी लड़कियों का उनके पतियों के साथ आदर सत्कार किया। तुम्हारे इस कार्य में ऋषिगण भी शामिल थे इसीलिये यह सब ऋषि मर जायँगे, तथा वैवस्वत मन्वन्तर में मेरे यज्ञ से पैदा होकर अयोनिज कहे जावेंगे और फिर दक्ष के पास पहुँच कर श्री शिवजी कहने लगे कि चाक्षुक मन्वन्तर में चाक्षुक नामका एक राजा होगा जो प्राचीन वर्हिष का प्रपौत्र अचेता राजा का पुत्र कहलायेगा उसी राजा को वृक्ष कन्या के गर्भ से तुम पैदा होगे और फिर भी तुम्हारा नाम दक्ष ही पड़ेगा।

दक्ष बोले– हे क्रूर बुद्धि वाले मैं आपके सभी धर्म सम्बन्धी कार्यों में उस जन्म में भी बार बार बाधायें डालूँगा। आपने मेरे कारण से सब ऋषियों को मार डाला है। आपने मेरे प्रति अत्यन्त क्रूरता का व्यवहार किया है। इसीलिए ब्राह्मण लोग यज्ञ में देवताओं के साथ तुम्हारी पूजा नहीं करेंगे। वे आहुति देने के बाद यज्ञकुण्ड में जल छोड़ दिया करेंगे और तुम स्वर्ग को त्याग कर इसी पृथ्वी लोक में युग के क्षीण होने तक स्थिति रहोगे।

रुद्र बोले–हे दक्ष सब लोकों में यह पृथ्वी लोक ही सबसे अच्छा है इस पृथ्वी लोक में ही सूर्य लोक स्थापित है। देवताओं में भी चारों वर्ण होते हैं और वे सब एक साथ खा पी लेते हैं इसलिए मैं सबसे अलग हूं अतः इसी कारण से सब लोग देवताओं के साथ मेरी पूजा नहीं करते श्रीशंकरजी से शप्त होकर मनुष्य लोकमें दक्षप्रजापति हुआ।

दक्ष ने अपने को अधिक विद्वान और सामर्थ्यवान, गृहपति जान कर देवताओं के साथ एक महायज्ञ शुरू किया। वैवस्वत मन्वन्तर के शुरू होने पर पर्वतों के राजा हिमालय ने मैना पत्नि के गर्भ से भगवती सती उमा के रूप में पैदा किया। वही कन्या जो पहले सती थी पीछे उमा हुई। श्री शिव जी के पास रहने के सिवाय उनके पास और कोई व्रत नियम नही था। वह किसी समय भी शिवजी को नहीं छोड़ती थी. जिस प्रकार लक्ष्मी जी श्रीविष्णु जी को नहीं छोड़ती तथा अदिति मरिचि कश्यप जी को, शचि इन्द्र को, रुचि सूर्य को, अरुन्धति वशिष्ठ जी को किसी भी तरह नहीं छोड़ती उसी तरह सती जी भी किसी तरह श्री शिवजी से अलग नहीं होती। दूसरे युग में भी ये कन्यायें भी उन्ही के साथ पैदा हुईं।

चाक्षुष मन्वन्तर में दक्ष प्रजापति भी श्री शंकर जी के शाप के कारण प्राचीन वर्हिष के नाती हुये और दश प्रचेता से मार्षा के गर्भ से फिर पैदा हुये। वैवस्वत मनु के पूर्व त्रेता युग के शुरू में जो भृगु आदि ऋषि थे उन्होंने वरुण के समान शरीर को रख कर महान देवताओं के यज्ञ से पैदा हुये। श्री शिवजी का और दक्ष प्रजापति का आपस में मन मुटाव जन्म जन्मांतर तक चलने लगा। इसी कारण किसी से भी वैर भाव नहीं करना चाहिये। क्योंकि शुभ कर्मों से परिचालित जन्तु के भीतरी भाव दूसरे जन्म में भी नहीं छूटते, अतः इसी कारण को मुख्य समझकर किसी से वैर भाव नहीं करना चाहिये।

ऋषि बोले–हे सूतजी अब आप हम को उसका वर्णन सुनाइये. जिसमें कि वैवस्वत मन्वन्तर में प्राचेतस दक्ष प्रजापति का अश्वमेध यज्ञ किस तरह क्षीण हुआ और भगवती सती जी ने किस तरह अपना शरीर जलाया। दक्ष ने सती जी की मृत्यु से क्रोधित श्री शिवजी को किस तरह खुश किया और अपने यज्ञ को किस तरह पूरा किया।

सूतजी बोले–कि हे ब्राह्मणो पहले काल में मेरू के सर्वरत्नों से शोभित ज्योतिष पर्वत की चोटी पर श्री शिवजी बैठे हुए हों।

गिरवर हिमालय की वह चोटी सबसे प्रसिद्ध पूज्य, काफी फैली चौड़ी विस्तार सहित किसी भी तरह की बाधा के योग्य न थी। देवी पार्वती जी उनकी बगल में बैठी थीं। उस समय सभी देवता, सूर्यगण, तेजस्वी वसुगण, अश्विनीकुमार राजा वैश्रवण अपने गुह्यकों को साथ लेकर, सनतकुमार चारों भाई, अंगिरा इत्यादि देवर्षि, विश्वावसु, गन्धर्व, नारद पर्वत, कैलाश पर्वत पर रहने वाले यक्षराज, महामुनि उशना और अप्सरायें आकर उनकी पूजा अर्चना करने लगे। उस समय ठंडी सुगन्धित हवा चल रही थी। सब ऋतुओं के फल फूल वहां खिल रहे थे। सब ऋषि, सिद्ध, विद्याधर और तपस्वी आदि महादेव जी की उपासना में लगे हुये थे। विविधि रूप धारी भूतगण, राक्षस, बलशाली पिशाच, आदि विविधि रूपों को धारण करके अनेकों अस्का शस्त्रों से सज्जित हुये भगवान की सेवा में संलग्न थे। नन्दीश्वर भगवान चमकते हुये त्रिशूल को लेकर उनके पास आज्ञा पालन के लिये बैठे हुये थे। हे विप्रो, उस समय नदियों में श्रेष्ठ देवि स्वरूप गंगा जी भी वहां सेवा में उपस्थित थीं। इस भांति देव, ऋषियों आदि से घिरे हुये भगवान महादेव जी वहां विराजमान थे।

उसी समय दक्ष प्रजापति ने हिमालय के ऊपर यज्ञ करना प्रारम्भ किया। यज्ञ का स्थान उन्होंने गंगाद्वार (हरिद्वार में कनखल में यह स्थान था) में बनाया था इन्द्रादिक सभी प्रमुख देवता लोग वहां जाने को तैयार हुये। द्रुमलताओं, गन्धर्व अप्सराओं और ऋटषियों से घिरे हुये दक्ष की त्रिलोकी के सभी प्राणी हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे। आदित्य, वसु, रुद्र साध्य, मरुत्गण और विष्णु आदक सभी वहां यज्ञ का भाग पाने के लिये पहुँचने लगे। उष्म, सोम, धूप पीने वाले अश्वनीकुमार, पितीश्वर, तथा ब्रह्मा जी आदि भी वहाँ आये। जरायुज आण्डज स्वेदज उद्भिज्ज आदि सभी प्राणी पत्नियों सहित वहां पर मन्त्रों के दुवारा बुलाये जाने लगे। इन सबके विमान अग्नि की तरह चमकते हुये थे।

उन सबको सुख से आकर बैठे हुये देखकर दधीचि ऋटषि ने दक्ष

प्रजापति से कहा पूजित को न पूजकर और पूजा न करने योग्य की पूजा करने पर मनुष्य घोर पाप का भागी होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिये। पूजनीय भगवान महादेव जी को आप क्यों नहीं बुला रहे हो!

दक्ष ने कहा—शूलधारण करने वाले एकादश रुद्र मेरे इस यज्ञ में मौजूद हैं। मैं दूसरे महादेव को नहीं जानता।

दधीचि बोले—महादेव को आपने निमन्त्रण नहीं दिया है, यह सबसे बड़ी बात है। महादेव जी से भी बड़ा कोई और देव है ऐसा हम नहीं जानते। इसलिये दक्ष प्रजापति का यह महान यज्ञ क्या सफली भूत होगा?

दक्ष बोले—इस यज्ञ में हम विधि विधान से मन्त्र से पवित्र किये हुये हवि को स्वर्ण के पात्र में रखकर विष्णु भगवान को समर्पण कर देंगे। क्योंकि विष्णु भगवान ही नित्य, हवनीय, प्रभु, विभु हैं।

यहां गिरिराज नन्दिनी पार्वती जी ने इन सभी देवताओं को कहीं जाते हुये देखा तो महादेव जी से पूछने लगीं—

उमादेवी बोलीं—हे भगवान! हे तत्वज्ञ, ये इन्द्रादिक देवता कहां जारहे हैं? आप मुझे यह सब समझाकर बताने की कृपा करें मुझे बड़ा ही कुतूहल हो रहा है।

श्री महादेव जी बोले—हे महाभागे, उत्तम प्रजापति जो दक्ष नाम वाले हैं वे अश्वमेध यज्ञ कर रहे हैं। ये सब देवता वहीं जा रहे हैं?

देवी बोली—हे प्रभो! आपको किस कारण वहां नहीं बुलाया और आप किस कारण से वहां नहीं जारहे हो?

महादेव जी बोले—हे महाभागे! देवों ने ही यह सब किया है। कि किसी भी यज्ञ में हमारा भाग नहीं रखा। हे वरवर्णिनि! इस व्यवस्था के कारण देवगण हम को यज्ञ में भाग नहीं देते।

देवी बोलीं—हे निष्पाप, हे भगवान, सभी देवों में आप अधिक प्रभाव वाले हैं और गुणवान हैं। तेज यश और शोभा में भी सबसे

वढ़कर हैं। आपका यह तिरस्कार मेरे लिये अधिक दुख प्रद है। मैं कौन सा दान तप या नियम करूँ जिससे मेरे पति आपको यज्ञ में आधा या तिहाई भाग मिलाकरे।

इस प्रकार दुखित अपनी पत्नि को देखकर महादेव जी बोले—

हे कृशोदराङ्गि! तुमने यह जो कहा कि मैं कुछ भी नहीं जानती यह क्या ठीक कहा है। साधु पुरुष ध्यान के द्वारा सब कुछ जान लेते हैं और तुम्हारी तो माया से यह तीनों लोक मोहित हैं। देखो प्रस्तोता यज्ञ में हमारी ही स्तुति कर रहे हैं। साम वेद का गान हो रहा है। ब्राह्मण यज्ञ में हमारी हो पूजा कर रहे हैं। अध्वर्युगण हमारे लिये भाग निकाल रहे हैं।

देवी बोली—हे प्रभो! स्त्रियों के मध्म में साधारण सा व्यक्ति अपनी प्रशंसा करके अपनी कमजोरी को छिपा लेता है। यह बात सही है। क्या आप भी ऐसा ही तो नहीं कर रहे हैं?

महेश्वर भगवान बोले—हे देवि! हम कभी भी अपनी झूठी प्रशंसा नहीं करते। हे वरारोहे! तुम आकर यह देखो कि अपने भाग के लिये हम किसकी रचना कर रहे हैं। अपनी प्राण से भी प्रिय पत्नि को ऐसा कहकर भगवान ने अपने मुख से एक प्रज्वलित भूत को उत्पन्न किया। उसके हजार सिर हजार पैर हजार नेत्र थे। वह हजार हाथों में हजारों मुद्गल वाण आदि को धारण किये हुये था। उसके हाथ में फरसा और तलवार भी थे। वह भयंकर रौद्र रूप वाला होने पर भी चमक रहा था। सिर पर अर्ध चन्द्र शोभायमान था। बाघम्बर पहने हुये था। उसके विकराल दांत थे पेट और मुख दोनों विशाल थे। लम्बे लम्बे ओठों के बीच उसकी जीभ बिजली की तरह लपलपाती थी। वह कन्नेर की माला पहने हुये था और क्रोध से उसकी आंखें चलायमान हो रहीं थीं। वह कभी नाचने लगता था कभी मधुर स्वर में बोलने लगता था। कभी योग परायण होकर ध्यान में लगजाता तो मोटी २ वस्तुओं को हटाने लगता था

ज्ञान, तप वैराग्य, ऐश्वय, क्षमा, धृति प्रभुत्व और आत्म संबोध तथा अधिष्ठान के गुणों से युक्त वह पृथ्वी पर घुटने टेककर और हाथ जोड़कर भगवान से बोला-हे प्रभो, कहिये क्या आज्ञा है, मैं आपका कौनसा कार्य करू ?

महादेव जी बोले-तुम दक्ष के यज्ञ का विध्वंश करो।

तब श्री महादेवजी की अनुमति पाकर अधिक बलवान वीरभद्र सतीपति श्री शिवजी के चरणों में प्रणाम करके जाल से मुक्त शेर की तरह गरजता हुआ चला, और मन ही मन में कहने लगा कि देवी भगवती नाराज है। अतः दक्ष के यज्ञ का नाश करना ही चाहिये। तत्काल उसी समय भगवती देवी के क्रोध से एक भयंकर माहेश्वरी भद्रकाली प्रकट हुई, जो वीरभद्र के साथ यज्ञ का नाश करने चली। प्रेतयोनि में रहने के कारण और भगवती उमा के क्रोध के कारण को दूर करने वाले श्री वीरभद्र ने अपने रोमों से अनेक रौद्रगणों की उत्पत्ति की। वे रुद्र भगवान की तरह ही वीर पराक्रम शाली बलवान थे। वे सौसौ और हजार २ की गिनती में दल बांध कर दक्ष के यज्ञ की तरफ चल दिये। उनके चीखों और शोरों से आकाश गूंज उठा। उनकी भयंकर आवाज से सभी देवता भयभीत होगये। उनके यज्ञ में पहुँचने से सभी ऋषि देवता, दानव इत्यादि शान्त हो गये और यज्ञ में चारो तरफ अंधेरा छा गया और तब श्रीरुद्र के अनेक गण वहां के सभी मनुष्यों को दुख पहुंचाने लगे। वे अत्यन्त बलवान रुद्र के गण सिंह की तरह गरजने लगे। किसी ने यज्ञागार को उखाड़ दिया किसी ने यज्ञयूप को नष्ट करदिया। कोई ताराड़व नृत्य करने लगा किसी २ ने यज्ञ भूमि को छिन्न भिन्न कर दिया वह यज्ञ भूमि ऐसे दीखती थी जैसे कि आसमान में तारे निकल रहे हों। उन रुद्र गणो ने अनेक मधुर पकवानों को यज्ञ की सामग्री जल को कीचड़ की तरह घी मांस और खाने पीने की चीजों को अपने हजारों मुखों से खाने लगे। उन्हों ने सब को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। भगवान् रुद्र के कोप से वह बड़े २ शरीर वाले अग्नि के समान रुद्रगण

देवताओं के मारते काटते उन्हें डराने लगे। उन्होंने देवताओं की पत्नियों को भी दुख पहुँचाया। भगवान रुद्र से पैदा हुये वे सभी रुद्र-गणोंने देवोंके रक्षा करने पर भी उन्हीं के सामने यज्ञ को नष्टकर दिया वह यंभकर आवाज करके सबको दुख पहुँचाने लगे और तब किसी ने दक्ष का शिर काट लिया, इस यज्ञ के नष्ट होने पर दक्ष अपना मृग का रूप रखकर आकाश की तरफ दौड़ने लगे। किन्तु वीरभद्र ने उसके पीछे दौड़ कर उसके शिर को काट दिया तब प्रजापति दक्ष मर गये और मरे हुए शरीर को रुद्रगणों ने अपने पैरों से कुचला। दक्षप्रजापति के मर जाने पर तैंतीस करोड़ देवता भी अग्नि के समान वन्धन में बँध गये इसके बाद सभी देवता इकट्ठे होकर वीरभद्र के पास आकर कहने लगे कि महाराज! अब आप प्रसन्न हो जाइये, आप हम लोगों पर नाराज न हों, और यह बताने की कृपा करें कि आप कौन हैं?

वीरभद्र ने कहा– हे देवताओ न तो हम देवता हैं न सूर्य हैं और न हम अपनी कोई इच्छा से यहाँ आये हैं। हम प्रजापति दक्ष के यज्ञ का नाश करने के लिए ही आये हुए हैं। हम भगवान श्री शिवजी के क्रोध से पैदा हुये हैं और हमारा नाम वीर भद्र है। और भगवती के क्रोध से यह भद्रकाली प्रकट हुई है। और यह भी हमारे साथ यज्ञ नाश करने के लिये आई हैं। हे देवो आप श्री शंकरजी की शरण में ही जाइये वह उत्तम वर के देने वाले हैं। वीर भद्र के कहने पर सब देव मिल कर और दक्ष प्रजापति श्री महादेवजी के पास जाकर स्तुति करने लगे। जिससे शूलपाणि भगवान शंकर प्रसन्न हो गये। और दक्षप्रजापति से कहने लगे कि हे दक्ष तुम्हारी दुर्गति से ही यज्ञ का नाश हुआ है। अब तुम मुझमें श्रद्धा रखते हो, और तुम बताओ कि मैं तुम को कौनसा वरदान दूँ। जब वीरभद्र तथा हजारों रुद्रगणों न यज्ञ भूमि को नष्ट भ्रष्ट कर दिया, यज्ञ यूपों को उखाड़ दिया सब सामग्री खा पी गए यज्ञ के दीक्षित ब्राह्मण लोग सभी चले गये, यज्ञाग्नि भी बुझगई रुद्रगणों को मारने सेवक भी इधर उधर रोते हुए पड़े थे।

और चारों तरफ गिद्ध कौऐ मड़रा रहे थे। उसी समय शत्रुओं का नाश करने वाले भगवान शंकर जी प्राणापान को यत्नपूर्वक अपने स्थान में रोककर इधर उधर देखते हुये अचानक अग्नि कुण्ड से बाहर निकल आये। आकर दक्ष प्रजापति से बोले कि हम तुम पर प्रसन्न हैं कोई वर मांगिये, तब दक्ष प्रजापति बोले जो अधिक दुखी होकर रो रहे थे वह डरते हुये श्री शिवजी की तरफ देखते हुये बोले कि यदि भगवान आप हम पर प्रसन्न हैं और हम आपके वर पाने योग्य हैं तो हमें यह वर दीजिये, कि हमारी जो यज्ञ की सब सामग्री नष्ट हो गई है और सब खा पी कर खत्म करदी जिनको हम वर्षों से एकत्रित कर रहे थे, वह सब ऐसी ही होजाय जैसे पहले यज्ञ के समय थी बस हम यही वर चाहते हैं। अतः इस तरह श्री भगवान शंकर से वरदान पाकर दक्ष प्रजापति जमीन में बैठकर भगवान शंकर की आठ हजार नामों से स्तुति करने लगे।

दक्ष बोले–हे प्रभू! आपको प्रणाम है आप त्रिनयन, वृषभध्वज, धर्माध्यक्ष, देवेन्द्र अमरश्रेष्ठ, सहस्राक्ष, विरुपाक्ष, सर्वतः श्रुतिमान और पूरे संसार को आप ढके हुये हो। आप महा कर्ण, कुम्भकरण समुद्र वासी, शतानन, गजेन्द्रकर्ण, गोकर्ण नामों से आप प्रसिद्ध हैं सब लोग आप की स्तुति पूजा ध्यान करते हैं। आप इन्द्र आदि देवता और पूरे संसार के पालन करने वाले हैं। ब्रह्मा, विष्णु, मुनि समुद्राम्बुधर महामूर्त्ति हैं। गोष्ठ में जिस तरह गौगण रहते हैं उसी तरह सब देवगण आप में स्थित रहते हैं। सोम, अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु, बृहस्पति इत्यादि यह सब आपके ही स्वरूप हैं। भव, पूर्व रुद्र, वरदाता, पशुपति अन्धक विनाशी शम्भू को बार २ मैं प्रणाम करता हूं। आप त्रिजट, त्रिशीर्ष, त्रिशूलधारी, दराड़ी दशिड़मुण्ड सूर्यपति वृषकन्ध, हिरण्यगर्भ हिरण्यपति, होत्र, मन्त्र, भीमसेन, सहस्र नयन बालरूप बालधर वृषक कुन्द काम इन्द्र इत्यादि अनेक आठों हजार नामों से प्रसिद्ध हैं। हे देव आपको बार बार प्रणाम है। भगवन आप सब जगह निवास करने वाले सर्वांग सर्वभूपति सब जीवों की अन्तरात्मा हैं। इसी कारण

हमने आपको निमन्त्रित नहीं किया। दक्षिणा वाले यज्ञ में आप ही यजनीय माने जाते हैं। और आप ही सर्वकर्त्ता हैं। हमने आपकी माया से मोहित होकर आपको नहीं बुलाया। हे भगवन अब आप प्रसन्न होजाइये। हम आपकी शरण में हैं। और इस तरह श्री शिवजी की स्तुति करके दक्ष प्रजापति शान्त हो गये। दक्ष प्रजापति की स्तुति से प्रसन्न होकर श्री शिवजी दक्ष प्रजापति से कहने लगे कि हे दक्ष हम तुम्हारी स्तुति से खुश हैं, और अब तुम मेरे ही लोक में जाओगे।

श्री भगवान महादेव जी ने दक्ष को इस प्रकार समझाकर उससे कहा कि तुमको इस यज्ञ के विषय में क्रोध नहीं करना चाहिये। मैंने ही इस यज्ञ का नाश किया है। हम तुमको फिर वर देते हैं तुम एक चित्त होकर सुनो। हे दक्ष प्रजापति तुमको हमारे प्रसाद से हजार अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञों का फल मिलेगा। और पाशुपाश विमोचन पाशुपत व्रत है। जिसके करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। उसका पूरा फल तुम्हें मिलेगा।

तब श्री महादेव जी अपनी पत्नि उमा और गणों के साथ अन्तर्ध्यान होगये। और उस समय ब्रह्माजी से मिले। यथोक्त भाग को प्राप्त करके शिवजी ने ज्वर को कई भागों में बांट दिया। अब हम उसकी कथा का वर्णन सुनायेंगे। नागों के लिये शीर्षा भिताप, पर्वतों के लिये शिला रोग, जल के लिये शैवाल और सांपों के लिये केंचुल, गायों के लिये खुरका रोग, पृथ्वी के लिये ऊसर, कोकिलों के लिये नेत्र रोग, बकरों के लिये पित्त भेद, तोता के लिये त्रिभिका ज्वर, सिंहों के लिये परिश्रम और मनुष्यों के लिये ज्वर नाम से प्रसिद्ध है। यह ज्वर जन्म मरण और मनुष्य के शरीर में बीच में भी प्रवेश करता है। जो अधिक तेज ज्वर होता है वह भगवान महेश्वर का तेज है। यह ईश्वर रूपी ज्वर हमेशा पूजनीय योग्य है। जो मनुष्य इस ज्वरोत्पति को एकाग्रचित्त होकर पढ़ता है और सुनता है वह हमेशा निरोगी होकर सुखी रहते हैं। और दक्ष से कही हुई जो स्तुति स्तवन को पढता या सुनता है वह भी हमेशा सुखी होकर जीवन व्यतीत करता है।

जिस तरह सब देवताओं में श्री शिवजी बड़े हैं उसी तरह सब ब्रह्म-निर्मित स्तवों में यह स्तव श्रेष्ठ है। जिसको यश, धन, विद्या कीर्ति आयु की इच्छा हो वह भक्ति पूर्वक इस स्तव का पाठ करे तो उसके सब दुख दूर हो जाते हैं। जो अपने घर में इस स्तव का पाठ करता है। उसके घर में भूत प्रेत, नाग, यक्ष किसी का भी डर नहीं रहता। जो पवित्रा स्त्री इस स्तव का पाठ करती है वह पिता के घर और अपने घर दोनों के घर से मान पाती है। जो इस सम्पूर्ण स्तोत्र का पाठ करता है उसके सब दुख दूर होजाते हैं।

श्री शिवजी के साथ पार्वती और नंदीश्वर कार्तिकेय की अपनी श्रद्धा भक्ति से जो दक्षिणा इत्यादि देकर स्तोत्र में आये हुये नामों का पाठ करता है उसे मन की इच्छित वस्तु और सब भोगों का फल मिलता है। और मरने पर अपनी पत्नियों के साथ स्वर्ग में जाता है। जो मनुष्य इस दक्षकृत स्तोत्र का पाठ करता है वह विमान पर बैठ कर इन्द्र की तरह शोभा पाता है। सत्यवती नन्दन भगवान व्यास ने कहा है कि इस स्तोत्र को हर किसी को बिना सोचे समझे नहीं कहना चाहिये, इस परम गुह्य स्तोत्र को सुनकर सभी जाति के स्त्री पुरुष इत्यादि रुद्र लोक को प्राप्त होते हैं। जो किसी पर्व के समय यह स्तोत्र पढ़ता या सुनता है वह पढ़ने और सुनने वाले रुद्र लोक को प्राप्त होते हैं।

इति श्री वायु महापुराण का दक्षशाप-वर्णन नामका तीसवांअध्याय समाप्त

एकतीसवाँ अध्याय

(देववंश-वर्णन)

सूतजी बोले—हमने इस पापनाशिनी कथा का आपको वर्णन सुनाया। यह कथा दक्ष के विषय में श्री महादेव जी ने कही थी। पितृवंश की कथा की तरह ही अब हम देव वंश की कथा का वर्णन करेंगे। स्वायम्भुव मनु के समय में त्रेतायुग के शुरू में याम नाम के राजा प्रसिद्ध देवता थे जो पहले यज्ञपुत्र कहलाये। अजित ब्रह्माजी के पुत्र थे। और जित तथा अजित स्वायम्भुव मनु के पुत्र

थे। ब्रह्माजी के मानस पुत्र शुक्र कहलाते थे। देवों के तीनगण हैं। ये तृषिमान गण कहलाते हैं। स्वायम्भुव मनु के तैंतीस पुत्र छन्दोग कहलाते हैं। यदु, ययाति, दो देव कहलाते हैं। और दीप्य, स्तवस, मति, विभास, क्रतु, प्रजापति, विशत, द्युति, वायस तथा मंगल इत्यादि बारह देव कहलाते हैं। शुचिश्रवा, समय, मधुप, विश्वेदेवादि यमी, श्रुतिभृण इत्यादि और वो बारह देव स्वायम्भुव मनु के समय स्थिति थे। ये शराब पीने वाले अत्यन्त पराक्रमशाली थे। ये त्विषि-मान गण कहे जाते थे। ये आठों देवयोनि के रूप हैं पहला सुपर्ण दूसरा यक्ष, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस, और पित्तर इत्यादि थे। स्वोयम्भुव मनु के समय में इन्हीं जैसी हजारों सन्तानें पैदा हुईं। प्रजाओं के, देवताओं के, ऋषियों के और पितरों के साथ जो पहले सप्तऋषि थे, अब हम उनकी कथा का वर्णन करेंगे। स्वायम्भुव मनु के मन्वन्तर में स्वयम्भू मनु के दस पुत्र थे। इनके ये नाम हैं। अग्नीध्र, अतिबाहु, मेधा, मेधातिथि, वसु ज्योतिष्मान, द्युतिमान हव्य और सवन इत्यादि थे।

श्री वायुदेव ने कहा है कि सबसे पहले युग में ये ही अधिक वीर राजा थे। असुर गन्धर्व यक्ष पिशाच मनुष्यों सुपर्ण इत्यादि की कथा का वर्णन करना सैकड़ों वर्षों में भी होना सम्भव नहीं है इनकी गणना बहुत अधिक है इसलिये हमने संक्षेप में इस कथा को कहा है। स्वायम्भुव मनु के समय में व्रज कुल नाम के प्रजाजन बहुत वर्ष पहले समाप्त हो चुके।

ऋषियों ने कहा—ये काल रूपी भगवान कौन से हैं जो सब जीवों को नष्ट करते हैं। ये किस कुल के हैं और कौन इनके माता पिता हैं। इनका कौनसा स्वरूप है। और इनका क्या नाम है। और इनकी कौन सी आत्मा है। अब आप हमको इस कथा का वर्णन सुनाइये।

सूतजी बोले—हे ऋषियो अब हम आपको काल रूपी भगवान के विषय में बतायेंगे आप एकचित्त होकर सुनिये। सूर्य से काल पैदा

हुये इनका आदि निमेष है और ये संख्या चक्षु कहलाते हैं। इनकी मूर्ति दिन रात हैं और इनके अंग निमेष कहे गये हैं और इनका कलास्वरूप संवत्सरशत नाम है ये भूत वर्तमान काल को और वर्तमान काल स्वरूप हैं। हम काल को पांच भागों में बांट कर उनके भेद को बतायेंगे। दिन, रात, पक्ष, मास, ऋतु और अयन इत्यादि पांच भागों में बांटा है। पहला संवत्सर दूसरा परिवत्स, तीसरा इद्वत्सर चौथा अनुवत्सर, और पांचवां वत्सर काल कहलाता है। अब मैं इसकी कथा का हाल सुनाऊँगा। ऋतु नामकी जो अग्नि पहले बताई है। वही संवत्सर है और काल अग्नि है वही परिवत्सर कही गई है और सूर्य से पैदा हुई अग्नि इद्वत्सर सोम कहलाती है। जो आकाश में चलता है और जलों का सार भूत कृष्ण और शुक्ल पक्ष की तरह घटने बढ़ने वाला है जो उनचास शरीरों से सब प्राणी को दुख देते हैं वही वत्सर वायु है। ब्रह्माजी ने रोने के कारण रुद्र नाम पड़ने वाले रुद्र को तीन भागों में बांट दिया, वही नील लोहित रुद्र, रुद्र के वत्सर कहे जाते हैं। कालात्मा प्रपितामह हर एक अंग के संयोग से ऋक्, साम, यजु के पैदा करने के स्थान और पांचों कालों के स्वामी हैं। वे ही अग्नि, यजु, सोम, भूत और प्रजापति हैं ब्राह्मणों ने सूर्य को ही अग्नि और संवत्सर बताया है भगवान सूर्य से ही कालों का हिस्सा होता है विकारावस्था में ही ब्रह्मा जी के मानस पुत्र प्रसन्न होकर एक एक दिन और महीने और ऋतु के अदलते बदलते रहते हैं और ये ही प्रजापति पितामह ब्रह्मा जी कहलाते हैं और ये ही सूर्य, नदी भानु, सरिता, ब्रह्म संस्कृत जीवन माने गए हैं भूतों के पैदा करने के कारण और नाश के कारण ये भास्कर नाम से प्रसिद्ध हैं। तीसरे परिवत्सर तारागण हैं। जो सोम के और निखिल औषधियों के पीत हैं इस कारण ये भी पितामह नाम से प्रसिद्ध हैं ये सभी जीवों को जीवन देने वाले और योगक्षेम करने वाले हैं ये हमेशा चमकते रहकर संसार का पोषण करते हैं। इनसे ही तिथि, पूर्णिमा, अमावस्या, और पर्वसन्धि पैदा हुई हैं। ये निशाचर और प्रजापति नाम से प्रसिद्ध हैं ये ही प्राण, अपान, और

वायु के बदलने वाले हैं। ये सब भूतों के और लोकों के ईश्वर और पृथ्वी को धारण करने वाले हैं। ये ही जल, अग्नि, भूमि, सूर्य और चन्द्रमा को पैदा करने वाले हैं। ये ही जल, अग्नि, भूमि, सूर्य और प्रपितामह नाम से प्रसिद्ध हैं। देवगण अपने इच्छित फल को पाने के लिये औषधियों के नष्ट हो जाने पर त्रिकपाल और त्र्म्बक से भगवान की पूजा करते हैं। इसी कारण वे त्र्म्बक कहलाते हैं। गायत्री, त्रिष्टुप और नगतीत्रयम्बका नाम से प्रसिद्ध हैं। ब्राह्मणों ने पांच वर्षों का एक युग बताया है। प्रत्येक संवत्सर में वसन्त इत्यादि छओ ऋतुओं होती हैं ऋतु पत्र आर्तवगण पांच प्रकार के होते हैं। यह वायु मनुष्यों के जीवन का काल रूप होकर संहार करती हुई नदी के बहाव की तरह चलने लगती है और फिर वह वायु दिन रात को एक करने वाली होती हैं। ये सब प्रजापति सब मनुष्यों में मुख्य और लोकात्मा, लोकों के पिता माने जाते हैं। ब्रह्मा जी के ध्यान मग्न होते हुये मुख से रोते हुए रुद्र पैदा हुए और ये ही आत्मा रूप से सब जीवों की उत्पत्ति करने वाले हैं। ये ही अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, संवत्सर, कालात्मा नित्यसंहार करने वाले विभु कहे जाते हैं और ये ही इद्धत्सर नाम से प्रसिद्ध हैं। ये ही भगवान क्रोधित होकर संसार में अपने तेज से आश्रय और आश्रय संयोग के कारण अपने नामों और शरीरों से वर्तमान रहते हैं। तब उन्हीं के बल से दूसरी सृष्टि देवों की, पितरों की तथा कालों की हुई तभी से यह भद्र रूप महादेव के नाम से प्रसिद्ध हुए हैं। ये नीललोहित भगवान शंकर देवों के भी देव प्रजा धीषियों के प्रजापति, सब जीवों के पैदा करने वाले हैं। इनके हजारों पुत्र पौत्रादिक हैं जिनकी गणना नहीं हो सकती है। जो मनुष्य ध्यान मग्न होकर शुद्ध विचार से इस देव वंश का पाठ करता है वह हमेशा सुखी रहता है।

इति श्री वायु महापुराण का देव वंश नाम का एकतीसवां अध्याय समाप्त हुआ ॥३१॥

—❀—

* बत्तीसवाँ अध्याय *

(युग-धर्म)

वायु कहने लगे— अब हम आपको प्रणव के विषय में कुछ वर्णन करेंगे आप लोग ध्यान पूर्वक होकर सुनिये। ब्रह्म ही ओंकार अक्षर है। इसके तीन वर्ण माने गये हैं। इसके जितने भी देवता और वर्ण हैं वे सब ओंकार से ही पैदा हुये हैं। ऋक्, यजु, साम, जल और अग्नि भी ओंकार से ही पैदा हुए हैं। इस ओंकार अक्षर से और दूसरे भी प्रकट हुए हैं सब देवों में जो चौदह देवता हैं, उनके भी बीज जो पाने वाले, सभी जगह जाने वाले और सब योगों को जानने वाले हैं। वे ही लोकों पर अनुग्रह करने के लिए ओंकार शुरू, बीच तथा आखिरी हिस्से कहे जाते हैं। ओंकार स्वरूप श्री शिव जी से इन्द्र, पितर, सप्तर्षि, देवता इत्यादि पैदा हुये हैं। इसलोक और परलोक में ओंकार ही सबसे श्रेष्ठ पद है। काल को युग नाम से भी पुकारा गया है। सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग के साथ साथ युग भी चक्र की तरह नीचे ऊपर घूमता रहता है। देवता लोग, ऋषि इत्यादि तब एकाग्र चित्त होकर तपस्या करने लग जाते हैं क्योंकि तब काल के वश होकर देवता लोग चिन्तित हो गये और स्वयं वे उसकी सीमा निर्धारित करने में असमर्थ हो गये। फिर देवता काल से डर कर श्री शिवजी की शरण में गये। और भगवान से कहने लगे कि हे देव! शंकर जी ये चतुर्मुखी चार स्वरूप वाले काल कौन हैं इनका कौन पार पा सकता है।

तब श्री शिव जी ने उस चतुर्मुखी काल को देखकर कहा— आप किसी बात की चिन्ता न करें मैं आपके सब कार्य पूरे कर दूँगा इसके बाद स्वयं काल रूप भगवान श्री महादेव जी कहने लगे कि जो चार जीभों वाला काल का सफेद मुँह है वह काल का सतयुग नाम का मुँह कहलाता है। यही मुँह देव श्रेष्ठ ब्रह्मा और वैवस्वत भी कहलाता है। और जो लाल रंग की तीन जीभों वाला दूसरा मुँह त्रेतायुग कहलाता है इस युग में सभी लोग श्री महादेव जी की प्रेरणा

से यज्ञ में पूवरा होते हैं। इन्हीं से यज्ञ शुरू होता है ये ही अग्नि काल की जीभें कहलाती हैं इनके तीन जीभें हैं और तीन अग्नि हैं। और जो दो जीभों वाला लाल और पीले रंग का मुख है वह द्वापर युग में हम दो पैर वाले होते हैं। और जो काले रंग का लाल आंखों वाला मुँह है जिसके काले रंग की लपलपाती हुई जीभ है तथा सारे संसार को दुख देने वाला घोर कलियुग है। इस युग में न सुख है न मुक्ति तथा सब मनुष्य दुखी होकर काल से ग्रस्त होंगे।

सतयुग में ब्राह्मण लोगों की पूजा होती है। त्रेतायुग में यज्ञादिक होते हैं द्वापर युग में श्री विष्णु जी की पूजा मान्य है और मैं चारों युगों में पूजित होता हूँ। काल की ब्रह्माजी, विष्णुजी, और यज्ञ ये तीन कलायें हैं। लेकिन चतुर्मुखी महेश्वर सभी युगों में निवास करते हैं। मैं ही आप लोगों को पैदा करने वाला हूँ और मैं ही मनुष्य हूं। मैं ही काल हूँ और मैं ही काल का प्रवृतक हूँ, मैं ही युगों का करने वाला परम श्रेष्ठ हूँ अतः इसी कारण कलियुग आने पर संसार के कल्याण के लिये तथा देवताओं को अभयदान देने के लिये मैं दोनों लोकों में मंगल कारक और पूजनीय बनूँगा। हे देवताओ! आप कलियुग की चिन्ता न करें। श्री भगवान शंकर के इस तरह कहने पर देवता तथा ऋषियों ने श्री भगवान शंकर जी को सिर झुका कर प्रणाम किया और बोले–

देवता और ऋषियों ने कहा—हे भगवान अब आप हमें यह बताइये कि, अत्यन्त तेजस्वी, दीर्घ शरीर, अधिक बलवान सब जीवों के लिये अधिक भयंकर काल चतुर्मुखी कैसे पैदा हुये?

महादेव जी बोले–हे देव और ऋषियो! ये काल चार मुख वाले चार दांत वाले और चार मूर्ति वाले हैं। संसार की रक्षा के लिये ये सब को नष्ट करदेते हैं। काल जीवों को पैदा करते हैं और फिर क्रम से उनका संहार भी कर देते हैं। सभी इस काल के वश में हैं किन्तु ये काल किसी के वश में नहीं है। अतः इस कारण काल ही सब के ऊपर शासन करते हैं। इक्कीसयुग काल का एक कदम होता है।

और ये ही युगों के क्रम से मन्वन्तर कहलाते हैं। एक २ पैर रख कर जब काल इक्कीस कदम रखते हैं तब मन्वन्तर खतम होता है। देवता, ऋषि, पितरों ने भगवान शंकर से यह कथा सुनकर प्रसन्न होकर उनको प्रणाम किया। तब भगवान उसी स्थान पर अन्तर्धान हो गये। भगवान काल इसी तरह बार बार देवता, ऋषि और पितरों की उत्पत्ति और संहार करते हैं। अतः काल के डर से भयभीत होकर देवता, ऋषि और पितरों को भगवान महादेव की पूजा करनी चाहिये। कलियुग में अधिक वर्ष तक कठिन तपस्या करनी चाहिये जो तपस्या से ईश्वर शिवजी को प्राप्त करता है वह महान पुण्य का भागी होता है। देवता भी तपस्या करने की इच्छा से पृथ्वी पर जन्म लेने के लिये आते हैं। जब कलियुग आता है तभी वे भी ऐसा ही करते हैं। सत्ययुग त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग के क्षय होने पर सप्त-ऋषियों के साथ फिर आने वाले त्रेतायुग में वे ही होने वाले क्षत्रियों के वंश के कारण हैं। सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, के क्षीण होजाने पर द्वापर युग के अन्त में क्षत्रिय मनुष्य ऋषियों के साथ रहते हैं। कलियुग में ब्राह्मणों के लिये ही क्षत्रियों का विनाश होता है। जो पातकी मनुष्य होते हैं वे कलियुग में जन्म धारण करते हैं।

अब हम उन स्वर्ग सिधारे राजाओं की कथा को सुनाएंगे। जमदग्नि के पुत्र परशुरामजी ने क्षत्रियों को मार डाला, क्योंकि वे क्षत्रियराजा पापियों की तथा दुष्टात्माओं की सख्या बढ़ारहे थे। इक्ष्वाकुवंश का मूल ऐड़ वंश है। श्रोणिवन्ध राजा इक्ष्वाकुवंश के राजा तथा और क्षत्रियों ने इस ऐड़वंश में जन्म लिया। इन राजाओं के सौ कुलों का वर्णन कहा गया है। तथा इन्हीं सौ कुलों में भोज-कुल के वंश का भी वर्णन है। भोजकुल में प्रायः तीन सौ क्षत्रिय थे, जो चार भागों में बांटा है। उनमें जो राजा बीत चुके हैं अब उनकी कथा का वर्णन करेंगे। प्रतिविन्ध्य, हैहय और धार्तराष्ट्र के सौ सौ कुल अतीत हुए हैं, जनमेजय के अस्सी कुल, ब्रह्मदत्त, वीर्यी, पौल के सौ सौ कुल तथा काशिकुश के भी सौ कुल और शीशबिन्दुओं के हजार कुल अतीत हुए हैं। और इन्हीं राजाओं ने बहुत दक्षिणा

देकर अश्वमेध यज्ञ किया। सत्ययुग में चार हजार वर्षों का प्रक्रियापाद कहा है। इस कारण चार सौ संध्याऐ और उतने ही संध्याश होते हैं। त्रेतायुग तीन हजार वर्ष का होता है। इसमें तीन सौ वर्ष की संध्याऐ और तीन सौ वर्ष की संध्याश होते हैं। त्रेतायुग तीन हजार का अनुषंग पाद माना गया है। दो हजार वर्ष का द्वापर होता है। यह द्वापर युग उपोद्घात पाद माना गया है। इसमें दो हजार वर्ष की संध्याऐ तथा दो हजार वर्ष का संध्याश होता है। और कलियुग एक हजार वर्ष का होता है और ये संहारपाद नामका कहा गया है। ये सौ हजार वर्ष का होता है तथा इसमें सौ वर्ष की संध्याऐं तथा सौ वर्ष का संध्याश है। संध्या और संध्याश के कारण चारों युग बारह हजार वर्षों के होते हैं। अतः इस प्रकार युग पादों का परिमाण दस हजार वर्षों का होता है। और संध्या और संध्याश दो हजार वर्षों के होते हैं। जिस प्रकार वेद चारपादों के माने गये हैं उसी प्रकार युग भी चार पादों के होते हैं। जिस प्रकार विधाता, अपने आप चतुष्पाद बनाया है उसी प्रकार ब्रह्माजी ने भी अपने आप ही चतुष्पाद बनाया है॥

इति श्री वायु महापुराण का युग-धर्म नाम का बत्तीसवां अध्याय समाप्त हुआ॥३२॥

* तैंतीसवाँ अध्याय *

(स्वायम्भुव-वंश वर्णन)

सूतजी बोले—सभी मन्वन्तरों में नाम और रूप की तरह समान भाव से कुछ घमंड़ी देवता होते हैं। उस मन्वन्तर में बहुत से देवता ऋषि, मनु आदि सभी समान रूप घमंड़ी होते हैं, अब हम स्वायम्भुव मनु के वंश का वर्णन करेंगे। स्वायम्भुव मनु के भी दस पोते थे। जिन्होंने स्वायम्भुव मन्वन्तर के शुरू में त्रेतायुग के पहले सातों द्वीपों और समुद्रों के साथ पूरी पृथ्वी का प्रतिवर्ष कर लिया था। स्वायम्भुव मनु के पौत्रों ने और प्रियव्रत के पुत्रों ने योग और तपस्या के द्वारा प्रजा की सृष्टि के अनुसार पृथ्वी पर राज्य किया। वीर प्रजापति प्रियव्रत के एक सुन्दर कन्या भी पैदा हुई।

जिसका कर्दम ऋषि के साथ विवाह कर दिया। उनके और भी दो कन्यायें तथा सौ पुत्र पैदा हुये। इन दोनों की तरह शूरवीर दस भाई थे। इनके ये नाम थे। अग्नीध्र, वपुष्मान, मेधातिथि, विभु, ज्योतिष्मान, द्युतिमान, हव्य, सवन, सव्य इत्यादि। राजाप्रियव्रत ने इन सातों राजाओं को सात द्वीपों का राज्य दे दिया। जम्बूद्वीप का राजा अग्नीध्र बना और मेधातिथी को प्लक्ष का राजा बनाया। ज्योतिष्मान को कुशद्वीप का राजा बनाया। द्युतिमान को क्रौञ्चद्वीप का राजा बनाया। हव्य को शाकद्वीप का राजा बनाया। सवन को पुष्कर द्वीप का राजा बनाया। पुष्कर द्वीप सवन के महावीत और धातीक नाम के दो पुत्र पैदा हुये। उस महावीत के नाम पर महावीत नाम का वर्ष हुआ है। और धातीक के नाम पर धातीक खण्ड पड़ा है। हव्य वाहन के सात पुत्र पैदा हुये। ये बाद में शाक दीप में शासन करते थे। इनके नाम जलद, कुमार, सुकुमार, मणी चक्र, वसुमोद, सुमोद और महाद्रुम थे। इनके नामों से सात वर्ष प्रचलित हुये। यथा जलद वर्ष, कौमार वर्ष आदि।

क्रौञ्चद्वीप के स्वामी द्युप्तिमान हुये। उनके भी कुशल, मनुग, उष्ण, पीवर, अन्धारक, मुनि और दुन्दुभि नामक सात पुत्र हुये। उनके नाम पर ही क्रौंच द्वीप के सात देशों का नाम पड़ा। ये सात बड़े प्रसिद्ध देश हैं।

कुशद्वीप के स्वामी ज्योतिष्मान के भी उद्भिद्, वेणुमान, खैरथ, लवण, धृति, प्रभाकर और कपिल, नामक सात बलवान पुत्र हुये। उनके नाम पर भी वर्षों के नाम पड़े। इन खण्डों में प्रजा वर्णाश्रम धर्म के अनुसार रहती है। शाल्मलि द्वीप के स्वामी वपुष्मान हुये। उनके श्वेत, हरित जीभूत रोहित वैद्युत, मानस और सुप्रभ नामक सात पुत्र थे। इनके नाम पर भी श्वेत देश, रोहित देश प्रसिद्ध हुये। ये सातों पुत्र इन सात देशों के रक्षक बने।

अब हम जम्बूद्वीप के पास वाले अन्य सात द्वीपों का वर्णन करेंगे। मेधातिथि के सात पुत्र हुये। जो प्लक्षद्वीप के स्वामी थे। इनमें शान्त-

मय सबसे बड़े थे। इन सातों भाइयों के नाम पर ही वहाँ सात वर्ष हुये। शान्तमय के अन्य छोटे भाइयों के नाम इस प्रकार थे–शिशिर सुखोदय, अनक, ध्रुव, क्षेमक और शिवि। इन्होंने सात वर्षों का विभाजन करके उन्हें अपने २ नामों से चलाया। ये सब स्वायंभुव मन्वन्तर में वर्तमान थे। प्लक्ष द्वीप से लेकर शाकद्वीप तक पांच द्वीपों में वर्णाश्रम विभाग के अनुसार धर्म चल रहा था। इन सभी द्वीपों में सभी सुखी, पूर्ण आयु वाले रूप वल सम्पन्न और धर्म परायण लोग रहते थे।

अब सात द्वीपों से घिरे जम्बूदीप की कथा का वर्णन करूंगा। सो आप लोग सुनें। प्रियव्रत ने अपने महावली वड़े पुत्र अग्नीध्र को उनके पुत्र और कन्या के साथ जम्बूदीप का अधिपति बनाया। अग्नीध्र के पुत्र भी प्रजापति के समान महावलशाली थे। उनमें वड़ा नाभि और सबसे छोटा किम्पुरुष था। तीसरे का नाम हरिवर्ष, चौथे का नाम इलावृत्त, पांचवें का नाम रम्य छटे का नाम हिरण्यमान, सातवें का नाम कुरु आठवें का नाम भद्राश्व, नौवें का नाम केतुमाल था। इनके देशों के नाम इस प्रकार हैं–इनमें से इनके पिता आग्नीध्र को हिमनामक दक्षिण देश का अधिपति नियुक्त किया, किम्पुरुष को हेमकूट, हरिवर्ष को नैषध, इलावृत्त को सुमेरु का मध्यदेश, रम्य को नील देश, हिरण्यमान् को उत्तर का श्वेत देश, कुरु को उत्तर दिशा में शृङ्ग मान, भद्राश्व को माल्यवान, और केतुमाल को गन्धमादन देश दिया। इस प्रकार इसके ये ही नौ बड़े २ विभाग हुये। धर्मात्मा राजा अग्नीध्र अपने पुत्रों को इन देशों का स्वामी बनाकर तपस्या करने चले गये। इस प्रकार से स्वायंभुव के नाती और प्रियव्रत के पुत्रों ने सात दीपों में राज्य स्थापित किया।

अब हम हिमक्षेत्र के राजाओं के वंश का वर्णन करेंगे। राजा नाभि के मरुदेवी में ऋषभ नामक एक पुत्र पैदा हुआ। जो वह अधिक वलवान वीर प्रतापी राजा सब क्षत्रियों में श्रेष्ठ था। फिर राजा ऋषभ ने भरत नाम का एक पुत्र पैदा किया। जो अपने सब भाइयों

में बड़े थे। राजा ऋषभ ने अपने पुत्र को हिम देश का राजा बना कर आपने सन्यास लेलिया। और इसी कारण उस भरत के दक्षिण हिम देश का नाम भारतवर्ष पड़ा। भरत को सुमति नाम के पुत्र पैदा हुये। वह उत्तम धार्मिक ब्राह्मण थे। फिर राजा भरत ने अपने लड़के सुमति को राज्य का राजा बनाकर आपने सन्यास लेलिया। सुमति के एक तैजस नाम का पुत्र था। राजा इन्द्रद्युम्न के मरजाने पर स्वयं भगवान ने उनके वंश में प्रतिहार नाम से अवतार लिया। और फिर राजा प्रतिहार को प्रतिहर्त्ता नाम का पुत्र पैदा हुआ। फिर प्रतिहर्त्ता के पुत्र उन्नेता हुये, और उन्नेता के पुत्र उद्गीथ हुये, राजा उद्गीथ के पुत्र प्रस्तावि हुये, प्रस्तावि के पुत्र विभु हुये, राजा विभु के पुत्र पृथु हुये, पृथु के पुत्र नक्त हुये, राजा नक्त के पुत्र गय हुये, गय के पुत्र नर हुये, राजा नर के पुत्र विराट हुये, राजा विराट के पुत्र महावीर्य हुये, और महावीर्य को धीमान नाम के पुत्र हुये, धीमान राजा को महान नाम का पुत्र हुआ, और राजा महान को भोवन नाम का पुत्र पैदा हुआ, राजा भोवन को त्वष्टा नाम का पुत्र पैदा हुआ, त्वष्टा राजा को अरिज नाम का पुत्र पैदा हुआ अरिज को रजस नाम का पुत्र पैदा हुआ, रजस राजा को शतजित नाम का पुत्र पैदा हुआ, और राजा शतजित के सौ पुत्र पैदा हुये। पूरे संसार में अपना यश फैलाने का उन राजाओं ने पृथ्वी को उन्नत बनाया और फिर भारत वर्ष को बांट दिया। और उन्हीं राजाओं के वंशों से यह पृथ्वी चौयुगी पृथ्वी कहलायी। स्वायम्भुव मनु के वंशों के राजा भी उन्हीं के वंश के थे। ये स्वायम्भुव मनु के वंश का वर्णन कहा गया है। ऋषि, देव, पितर, गन्धर्व, राक्षस, किन्नर, मनुष्यों, पशुपक्षियों से यह पूरा संसार भरा हुआ है। संसार में यह सृष्टि युगों तक ऐसे ही क्रम से चलती रहती है॥

इति श्री वायु महापुराण का स्वायम्भुव वंश वर्णन नामका
तैतीसवां अध्याय समाप्त हुआ॥३३॥

—❀—

चौंतीसवाँ अध्याय

(जम्बूद्वीप का वर्णन)

ऋषि बोले—हे सूत जी, आपने सब राजाओं की कथा का वर्णन तो सुना दिया, अब आप कृपा करके यह बात बताइये, कि पृथ्वी की परिधि और विस्तार क्या है। इस संसार में कितने द्वीप हैं तथा कितने समुद्र हैं। कितने देश हैं उन देशों में कितनी नदियां हैं और उन नदियों के क्या २ नाम हैं। चन्द्र और सूर्य की गति क्या है और उनकी परिधि तथा विस्तार क्या है। महाभूतों का क्या प्रमाण है तथा लोका लोक का क्या प्रमाण है इत्यादि का विस्तार पूर्वक वर्णन सुनाइये। सूतजी बोले-हे ऋषियो, अब हम, आपको पृथ्वी की परिधी विस्तार, लोकालोक का प्रमाण, सूर्य चन्द्रमा की गति इत्यादि आपकी सब पूछी हुई बातों का वर्णन सुनाते हैं। आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये सातों द्वीपों के अन्तर्गत हजारों उपद्वीपों का अलग २ वर्णन करना असम्भव है। अतः इसलिये हम यहां पर केवल चन्द्र सूर्य, और ग्रहों को मिलाकर सातों द्वीपों का ही वर्णन करेंगे। हम नौ देशों वाले जम्बूद्वीप का वर्णन भली प्रकार से करेंगे।

इस द्वीप का परिमाण एक हजार एक सौ योजन का है। इस द्वीप में बहुत से देश हैं जिनमें तरह २ की धातुऐं पैदा होती हैं। इसमें अनेक पर्वत और नदियां हैं। यह भूतभावन देवों द्वारा व्याप्त जम्बूद्वीप नौ देशों में बटा हुआ है इस जम्बूद्वीप के चारों तरफ लवण सागर स्थिति है। जम्बूद्वीप के चारों ओर बहुत बड़े २ पर्वतों के ये नाम हैं पहला तुषाराबृत्त, दूसरा हिमवान तीसरा हेममय, चौथा हेमकूट, पाचवां सौने के समान चमकता हुआ निषध पर्वत और छठा मेरु पर्वत इत्यादि थे। इसके पूर्व का हिस्सा सफेद रंग का है और दक्षिण की तरफ से पीले रंग का है इसलिये यह वैश्यत्व माना गया है। यह पश्चिम की तरफ से काले रंग का है। इसलिये यह शूद्र माना है। उत्तर की तरफ लाल रंग का है, अतः इसलिये क्षत्रिय माना है। तरह २ के वर्ण होने के कारण इसको चतुर्वर्ण कहते हैं।

नीलगिर पर्वत मूंगा से युक्त और हिरण्यमय हैं इसकी चोटी साफ उज्ज्वल है। यह विशाल पर्वत अत्यन्त सुन्दर और स्वर्ण की तरह चमकीला है। यहां पर सिद्ध गन्धर्व निवास करते हैं। सब पर्वतों में यह पर्वत श्रेष्ठ है। इसका विस्तार नौहजार योजन का माना जाता है। इन सब पर्वतों के बीच में इलावृत्त नाम का देश स्थिति है। जम्बूदीप के परिमाण से मेरु पर्वत का परिमाण बहुत बड़ा माना जाता है। उनके बीच में नील और मध्य नामके दो पवत स्थिति हैं। इस पर्वतों का विस्तार दो हजार दो सौ योजन का बताया जाता है। जो दूसरे पर्वत श्वेत, हिमवान, श्रंगवान इत्यादि छोटे पर्वत हैं। इन पर्वतों का विस्तार बयासी हजार बानवे योजन का है। और इन पर्वतों के बीच में जो देश स्थिति हैं उनको सात भागों में अलग २ बांट दिया है। इन देशों में बहुत नदियां तथा चारों तरफ विशाल पर्वत हैं। वहां पर तरह २ की जाति के लोग आस पास रहते हैं।

जो हेमवत देश है वह भारत वर्ष के नाम से प्रसद्धि है। इस देश के आगे हेमकूट देश है और हेमकूट देश के आगे किम्पुरुष देशस्थिति है। नैषध हेमकूट देश हरिवर्ष नाम से प्रसिद्ध है। हरिवर्ष और मेरु पर्वत के आगे इलावृत देश स्थिति है। इलावृत देश से आगे चल कर नील रम्यक नामक देशस्थिति है। और रम्यक देश से आगे श्वेत देश है। श्वेत देश हिरण्यमय कहाजाता है। हिरण्यमय के आगे शृंगवान स्थिति है। यह कुरु नाम से प्रसिद्ध है दक्षिण और उत्तर दिशाओं में ये दो देश धनुषाकार हैं। वहां धनुषाकार देशों के मध्य में चार बड़े बड़े देश हैं किन्तु इलावृत्त मध्यम है। 'निषध' पर्वत के पूर्व भाग में 'दक्षिण आधी वेदी है' और नील पर्वत के पर भाग में उत्तर आधो वेदा है। इन दोनों के मध्य अर्थात् नील के दक्षिण और निषध के उत्तर में मेरु के बीच में ही इलावृत्त स्थित है। इसका विस्तार पैंतालीस हजार योजन है। इसके पश्चिम में गन्धमादन नामक पर्वत है। लम्बाई और विस्तार में माल्यवान के

समान है। इन सब में चतुर्वर्णमय मेरु ही सब से उत्तम कहा गया है। वहां सुन्दर धातु और जलाशय है वह चारों ओर से उन्नत और सुन्दर है। पूर्वजन्म के पुण्यवान, कृतात्मा पुरुष ही वहां निवास करते हैं। विनीत, महात्मा, महायोगी, सर्वलोक व्यापक, अनन्त महेश्वर यहां ही पैदा हुये हैं। वे मास मेदा और अस्थि से रहित हैं तथा ऐश्वर्य और योग से सर्व अन्तर्यामी हैं।

वह कमल जो भगवान विष्णु की नाभि से उत्पन्न हुआ है उसी से यह पृथ्वी भी पद्म रूप में उत्पन्न हुई है। उस पद्मरूप लोक का वर्णन सुनिये--हे विप्रो! पखंड़ी के समान चार विख्यात महाद्वीप उसके चारों ओर हैं। बीच में मेरु पर्वत 'केशर' की भांति स्थित है। मेरु का पार्श्व भाग अनेकों वर्णों का है। पूर्व में सफेद, दक्षिण में पीत उत्तर में लाल, और शिखिर में कृष्ण वर्ण है। ऐसा शोभामय स्वयं शुभ्र वर्ण वाला मेरु मध्य में राजा की भांति विराजमान है। यह बाल सूर्य की भांति चमकता है। यह पर्वत अत्यन्त दिव्य है। इसका बिस्तार चौंसठ हजार योजन है। यह दिव्य औषधियों से युक्त सुवर्णमय भुवनों से घिरा हुआ है। इसके ऊपर सुन्दरी अप्सराओं के गण, सभी देवगण, गन्धर्व, उरग, राक्षस आदि देखे जाते हैं। मेरु के चारों ओर चार देश बसे हैं। उनके नाम हैं--भद्राश्व, भरत, पश्चिम, केतुमाल और उत्तर कुरु।

इस पद्म की कर्णिका (पद्मकोष) छियानवे हजार योजन की है। चारों ओर के पद्म पत्रों का विस्तार सौहजार अस्सी योजन है। हे मुनियो अब कर्णिका का संक्षेप से वर्णन सुनो। अत्रि मुनि उसको शताश्रि और भृगु ऋषि सहस्राश्रि वाले मानते हैं। सावर्णि उसे अष्टाश्रि मानते हैं। और भागुरि ऋषि चतुरस्र मानते हैं। वार्षायणि समुद्राकार और गालव शरावाकार गार्म्य ऋषि उसको ऊर्ध्व वेणी के आकार का मानते हैं और कौष्टुकि परिमण्डलाकार। उस पर्वत राज के जिस भाग में जो ऋषि निवास करते हैं वे उसको वैसा ही मानते हैं। अच्छी प्रकार तो उसे केवल ब्रह्मा जी ही जानते हैं। जो मणियों

और रत्नों से भरा हुआ हो और जो अनेक वर्णों से युक्त सूर्य की सी कान्ति वाला हो उसे ही मेरु समझना चाहिये जिसके शैल खण्डों पर विविध भांति के जीव निवास करते हैं। ऋषियों की मनोहारिणी एक 'मनोवती' नाम वाली ब्रह्म सभा है। वही ईशानदेव का निवास स्थान है। वहीं सूर्य के समान तेजस्वी सहस्राक्ष रुद्र लोकपति महाराजा महेन्द्र का भी आवास स्थान है। जो सिद्धों द्वारा वन्दनीय है। यह इन्द्रलोक संसार की सर्वश्रेष्ठ सम्पत्तियों से युक्त और देवताओं से सदा सेवित है। यहां पूर्व और दक्खिन की ओर चमचमाता हुआ एक अग्निदेव का भास्वर विमान विद्यमान है, जो स्वर्णमय छतों, बाग व क्यारियों से युक्त है। वहां ही अग्निदेव की एक तेजोवती सभा है। जहां साक्षात् अग्निदेव निवास करते हैं। ये देवों के मुख हैं और हजारों शिखा वाले ज्वाला माली हैं तथा सभी देवों के वन्दनीय हैं। ब्राह्मण लोग उन्हें विशिष्ट अधिदेव कहते हैं। वस्तुतः अग्नि ही सभी तेजों की समष्टि हैं इसमें कोई सन्देह नहीं।

इसी भांति मेरु के तीसरे किनारे पर वैवस्वत की भी एक सभा है। जो 'सुसंयमा' नाम से प्रसिद्ध है। यहां पर चौथी सभा 'कृष्णङ्गना' नाम की है जो रक्षोपति धीमान विरूपाक्ष की है। पांचवें तट पर वैवस्वत की 'शुभवती' नामक सभा भी है। वहीं 'सती' नाम की एक सभा वरुणदेव की है। इस सभा की उत्तर दिशा में छटे तट पर वायु देव की 'गन्धवती' सभा है। सातवें तट पर चन्द्रमा की महोदया नाम की सभा है जिसमें वैदूर्य मणि की वेदी बनी है। आठवें स्तर पर महात्मा ईशान की तप्त स्वर्ण की भांति चमकती हुई 'यशोवती' नाम की सभा है। इन्द्र आदि आठ देवों के आठ विमान आठों दिशाओं में स्थित रहते हैं जिसमें भी हरुपर्वत को देवलोक कहा है। विविध यज्ञ, नियम, और अनेक जन्मों के सिंचित पुण्य वाले मनुष्य ही इस देवलोक को प्राप्त करते हैं। यही देवलोक स्वर्गलोक कहा गया है।

॥ इति श्री वायु महापुराण का जम्बूद्वीप वर्णन नामक
चौंतीसवां अध्याय समाप्त ॥

पैंतीसवाँ अध्याय (जम्बूद्वीप वर्णन)

सूतजी बोले—हे ऋषियो, मैंने पहले कर्णिका मूल का वर्णन किया है अब उसके नीचे के भाग का वर्णन सुनिये। उसके नीचे के भाग का मण्डल अड़तालीस हजार योजन के परिमाण वाला है। वह इस शैलराज को चारों ओर से घेरे हुये है। यह मेरु मूल के नाम से विख्यात है। इनमें हजारों पर्वतों में अनेक महान ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं जो मर्यादा पर्वत कहलाते हैं। ये पर्वत सीमा विभाजक हैं। ये पर्वत, निकुंज, कन्दर, नदी, गुहा और झरनों से शोभित हैं। इनके मध्य भाग वाले तट पर अनेक कोठे बने हुये हैं। जो फूलों से सुशोभित हैं। वहां कितने ही कुंज हैं। वहां हजारों पक्षी हैं सिंह, व्याघ्र, शरभ आदि जीव पड़े हुये हैं। वहां हाथी चामर आदिक अनेक जीव जन्तु भरे हैं। हे द्विज श्रेष्ठ! यह अति ऊँचा मेरु पर्वत है अब उसके विष्कम्भ के विषय में सुनिये—

मेरु के चारों दिशाओं में चार बड़े-बड़े स्तम्भ पाद हैं। जो सात द्वीप वाली पृथ्वी को पकड़े हुये हैं। इससे पृथ्वी हिलती डुलती नहीं। ये पर्वत पाद दश हजार योजन विस्तार वाले हैं। इनके नीचे देव गन्धर्वों की अनेक रत्न मय कन्दरायें सुशोभित हैं। मध्य देश में पुष्पों की ढेरी लगी रहती है। वहां मैनशिल की कन्दरायें हैं। स्वर्ण एवं मणियों से चित्रित गुफायें हैं। वहां सर्वत्र आनन्द और उल्लास है। शोभा सम्पन्न हजारों महल और विमान वहां विराजमान हैं। उसके दक्षिण में गन्धमादन, पूर्व में मन्दर, पश्चिम में विपुल और उत्तर में सुपार्श्व नाम के पर्वत हैं। उनके हजारों शृंगों पर दीपक और पताका के समान चार महान वृक्ष हैं उनकी शाखा में हजारों योजनों की ऊँचाई तक फैली हुई है जिनमें फल फूल सर्वदा लगे रहते हैं। उनके वृक्षों की जड़ें बहुत मजबूत थीं।

उस मन्दर वृक्ष के शिखर पर एक केतुगढ़ नामक महा-वृक्ष विद्यमान है। उसकी शाखाओं से कन्दरा में लघुपादप, और शिखिर आवृत है। उनमें घड़ों के समान बड़े बड़े फल लटके हुये हैं।

रमणीक केशर से युक्त सभी ऋतुओं वाले पुष्प महक रहे हैं। मन्द २ मारुत के झोंकों से वे पुष्प अपनी सुगन्ध से हजारों योजन तक महका देते हैं। हे वाह्मणो ! यह जो उत्तम मेरु पर्वत है अब हम उसके बारे में बतायेंगे। इसके चारों तरफ बड़े २ लट्ठे लगे हुये है जिस से पृथ्वी चारों तरफ से घिरी हुई है। ये दस हजार योजन के हैं। इनके नीचे राक्षस गन्धर्व तथा देवताओं के रहने के सुन्दर २ स्थान बने हुये हैं। हे ब्राह्मणो ! वही वरकेतु देश को भद्राश्व कहते हैं। जिस जगह मनुष्य हृषीकेश भगवान की पूजा करते हैं। हे मनुष्यो ! उसी जगह भगवान रुद्र ने कदम्ब पेड़ के नीचे स्वयं भगवान विष्णु ने अवतार लिया था इसी कारण इस देश का नाम भद्राश्व पड़ा था। दक्षिण शैल के शिखिर पर एक जम्बू नाम का पेड़ है जो देवताओं द्वारा हरा भरा फूलों से सुशोभित रहता है। इसकी जड़ें और शाखायें बहुत बड़ी और विशाल हैं। वह हर समय फूलों से शोभायमान रहता है। उस पहाड़ के शिखर से अमृत के समान मीठे मीठे फल हर समय मिलते रहते हैं। उस पर्वत से जिसके कारण एक गण्ड देश से जम्बू नाम की एक नदी निकली है। जिसमें शहद के समान मीठा रस बहता रहता है। उस नदी में सब पापों को नाश करने वाला आग के समान चमकता हुआ सोना पैदा होता है। वह सोना देवताओं के भूषणों का काम करता है। उस मीठे जम्बू नदी के रस को देवता, गन्धर्व, राक्षस इत्यादि पीते हैं। दक्षिण द्वीप में केतु रूप जम्बू वृक्ष जम्ब लोक में प्रसिद्ध है। इसी कारण यह जम्बू द्वीप के नाम से प्रसिद्ध है। उस विशाल शैल के पश्चिम शिखर पर एक बहुत बड़ी पीपल का वृक्ष है। उसकी शाखायें बहुत विस्तार में फैली हुई हैं। उसके चारों तरफ जीवजन्तु रहते हैं। स्वर्ण तथा मणियों से चित्रित उसकी पृथ्वी है। उस वृक्ष पर हर समय सभी ऋतुओं के फल लगे रहते हैं। उस वृक्ष की सेवा देवता, गन्धवर्व भी किया करते हैं। केतुमाल देश की पताका के समान वह वृक्ष है। हे ब्राह्मणो अब हम आपको यह बतायेंगे कि उस देश का नाम केतुमाल देश

कैसे पड़ा। क्षीर सागर के मथने के समय जब राक्षस लोग हार गये तब इन्द्र ने अपने गले से माला उतार कर इसी पीपल के वृक्ष पर टांग दी थी और लड़ाई में दैत्यों के प्रहार से वह माला मुरझा गई थी, सब सिद्धियों की देने वाली माला अब भी उस स्थान पर टँगी हुई है। सिद्ध लोग उसकी पूजा करते रहते हैं। उस केतुरूप वृक्ष पर इन्द्र के हाथ से टँगी माला अब भी वहां सुशोभित है। और उससे सुगन्धि निकलती रहती है इसी कारण इस का नाम स्वर्ग तथा मृत्यु लोक में केतुमाल देश पड़ा। उसी के पास उत्तर शिखर में एक बहुत बड़ा वट का वृक्ष है। तरह तरह के गन्धों से भरा रहता है। तथा उस पर लाल लाल मीठे फल लगते रहते हैं। सनत्कुमार इत्यादि महर्षियों के नाम पर ही उसका नाम कुरु पड़ा। उन महर्षियों ने शाश्वत लोक को प्राप्त किया। उन्हीं महर्षियों के नाम पर ही उस द्वीप का नाम दोनों लोकों में उत्तर कुरु के नाम से प्रसिद्ध हुआ॥

इति का जम्बूद्वीप वर्णन नाम का पैंतीसवां अध्याय समाप्त॥३५॥

* छत्तीसवाँ अध्याय *

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले–अब मैं उन चारों पर्वतों के रमणीक स्थानों को क्रम से कहूँगा। वहां यथा क्रम सभी काल में फल फूल लगे रहते हैं। सब जगह वहां पर सारिका, मयूर, चकोर, मदोत्कट, शुक और चित्रविचित्र भृङ्ग विचरते हैं। जीव जीवक, हेमक, मत्त कोकिल, वल्गु, सुकण्ठ कांचन, कलविंग आदि पक्षीगणों के मधुर निनाद से उनके प्रान्तर भाग सदा गुंजायमान और रमणीक बने रहते हैं। मतवाले और अलसाये भ्रमरों, मधुकरों से तथा किन्नरों से भी कहीं कहीं वह वन मुखरित रहता है। कोमल पल्लवों से सुशोभित सब वृक्ष वहां मन्द मन्द मारुत से कँपाये जाने पर सदा पुष्प वृद्धि करते हैं। फूलों के गुच्छे, मंजरियां और लाल लाल कोमल पत्ते मन्दवायु के झोंके से सदा हिलते हुये ऐसे जान पड़ते हैं, मानो यहां हिंडोले पड़े हों।

हे ब्राह्मणो! नाना धातुओं से विचित्र रमणीय शतशत शिलायें

और शल्ल वहां पर बिखरे पड़े रहते हैं जिनसे सारा बन प्रान्त सुशोभित रहता है यत्र तत्र, सिद्ध, देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पन्नग सिद्ध और अप्सरायें झुण्डों में वहां घूमते फिरते हैं। वहां देवताओं के चार बड़े २ और रमणीय वन हैं जहां वे क्रीड़ा किया करते हैं। उनके नाम हैं–चैत्ररथ, जो पूर्व दिशा में है, दक्षिण में नन्दनवन, पश्चिम में वैभ्राज और उत्तर में सवितृवन हैं। इन चारों वनों का भीतर का भाग बड़ा ही मनोहर है। वहां सदा ही पक्षी कलरव करते रहते हैं। इन वनों में बड़े बड़े तीर्थ स्थान हैं। वहां बड़े २ नाग और महात्मा रहते हैं। वहां के जलाशयों का जल, मधुर स्वच्छ और मंगल कारक हैं। क्योंकि वहां वह जलराशि देवताओं, सिद्धों और राक्षसों द्वारा स्पर्श की जाती है। छाते के समान बड़े बड़े मनोहर, सुगन्धित और पंखड़ी वाले पुण्डरीक, उत्पलों आदि से वहां के जलाशय सुशोभित रहते हैं। वहां अरुणोद, दक्षिण में मानस, पश्चिम में शीतोद और उत्तर में महाभद्र नामक चार सरोवर हैं।

अरुणोद सरोवर के पूर्व के पर्वत का तत्व अब विस्तार से सुनिये। शीतान्त, कुमुञ्ज, सुधीर विकंक, मणिशील, कृष्णा, महानील, सविन्दु, मन्दर, रेणुमान, सुमेध, निषध और देवाचल तथा और भी बहुत से पर्वत मन्दर के पूर्व में वर्तमान हैं जो सदा सिद्धों के आवास स्थान हैं श्री शिखर, नमोत्तम शिशिर, कलिंग, पतंग, रुचक, सानुमान, ताम्राभ, विशाख, श्वेतोदर, समूल, विषधार, रत्नधार, एकशृंग, महामूल, गजशैल, पिशाचक, पंचशैल, कैलाश और श्रेष्ठ पर्वत हिमवान आदि ये सब मानसरोवर के दक्षिण में हैं। ये पर्वत श्रेष्ठ तथा देवस्वभाव हैं। ये सब देवताओं के समान तेजस्वी तथा मेरु के दक्षिण में स्थित हैं।

हे ब्राह्मणो! शीतोद सरोवर के दूसरे भाग में जो उत्तम पर्वत है उनके विषय में अब आप सुनिये–सुवर्चा, शिखिशैल, काल, वैदूर्यगिरि कपिल, पिंगल, रुद्र, सुरस, कुमुद, मधुमान, अंजन, मुकुट, कृष्ण, पाण्डर सहस्रशिखिर, परिजात और शैलराज त्रिशृंग आदिक पर्वत पश्चिम दिशा में स्थित हैं। महाशैल, शंकुकूट, वृषभ, हंसपर्वत, नाग, कपिल

सनुमान, इन्द्रशैल, नील, कनकशृंग, शतशृंग पुष्पक, मेघशैल, अचलोत्तम; विराज और जारुधि आदि पर्वत परम शोभायमान महाभद्र सरोवर के उत्तर में हैं। इनके बीच में जो स्थाल, अन्तर्द्रोणी और सरोवर हैं अब उनको सुनिये—

इति श्री वायु महापुराण का भुवनविन्यास नामकछतीसवां अध्याय समाप्त

सैंतीसवां अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले–शीतान्त और कुमुञ्ज पर्वतों के बीच एक द्रोणी (घाटी) है। यह तीन तीन सौ लम्बी और सौ योजन चौड़ी है। यहां नाना भांति के जीव और पक्षी निवास करतें हैं। यहां एक सरोवर है जिसका जल बड़ा मधुर स्वादिष्ट और रमणीक है। वह सरोवर पुण्डरीक और सहस्रदल कमलों से शोभित है। इसमें महानकाय दुर्धर्ष महासर्प निवास करते हैं। इसके शुभ जल में देव दानव स्नान किया करते हैं। यह सरोवर मृत्युलोक और स्वर्ग में विख्यात है। निर्मल जल से पूर्ण यह सरोवर सब देहधारियों का शरण दाता है।

वहीं ही पद्मवन में बिल्कुल बीच में एक महापद्म है जिसकी एक करोड़ पंखड़ियां हैं। वह तरुण सूर्य की भांति चमकता रहता है। वह सदा विकसित रहता है कभी भी मुर्झाता नहीं है। मतवाले भौंरे सदा गूँजते रहते हैं। मूर्तिमती लक्ष्मी का यह निवास स्थान है। इस में कोई सन्देह नहीं है। इसके पूर्वी तट पर सिद्ध गण निवास करते हैं। जहां फल फूलों से युक्त एक विल्ववन है। वह सौ योजन लम्बा चौड़ा है। इसमें विशाल तने वाले आधेकोश तक की ऊँचाई वाले हजारों वृक्ष हैं। उनकी विशाल शाखाओं में स्वर्ण के समान पीले, हरे तथा पाण्डुर वर्ण के फल लगे रहते है। जब ये पककर भर जाते हैं तब वन प्रान्त भर जाता है। यह वन संसार में श्रीवन के नाम से प्रसिद्ध है। यहां यक्ष, गन्धर्व किन्नेर, महानाग, सदा निवास करते हैं और विचरण करते हैं। विल्व के फलों के लिये यहां सिद्धगण निवास करते हैं

साक्षात लक्ष्मी यहां निवास करती हैं, सिद्धगण उन्हें प्रणाम करते हैं।

विकंक और मणिशैल के मध्य में सौ योजन लम्बा और दो योजन चौड़ा बड़ा सा चम्पक वन है। यहां भी सिद्ध चारण निवास करते हैं। फूलों की आभा से यह वन सदा जलता हुआ सा देदीप्यमान रहता है। आधे कोस तक फैली ऊँची ऊँची विशाल शाखा पत्तों के भार से झुकी रहती हैं। पाण्डु वर्ण के केसरों से युक्त और मनःशिला के चूर्ण की तरह रंग वाले, विकसित, मनोहर, सुगन्धित तीन हाथ लम्बे और दो हाथ चौड़े पुष्पों से वह सदा सुशोभित रहता है। उन पर भौंरे मँड़राते रहते हैं जिससे वन स्वयं मुखरित सा जान पड़ता है। यहां भगवान कश्यप प्रजापति का आश्रम भी है। यहां सिद्ध और मध्यजन भरे पड़े हैं और चारों वेदों का पाठ होता रहता है। महानील और कुमुंज पर्वतों के बीच भी सुख देने वाली महानदी के सिद्ध सेवित तट पर पचास योजन लम्बा और तीस योजन चौड़ा एक मनोहर तालवन है। वहां के ताड़ के पेड़ भी आधे कोस लम्बे हैं। इनका मूल भाग खूब मोटा और स्थिर है। सभी वृक्ष एक में सटे हुए हैं। उनमें सुगन्धित और रसीले फल लगे हुए हैं। इनको सिद्ध लोग खाया करते हैं। इस वन को इन्द्र के हाथी ऐरावत का वास स्थान कहा जाता है। यह बात तीनों लोकों में प्रसिद्ध है वेणुमंत और सुमेध पर्वतों के बीच सत्तर हजार योजन लम्बा और सौ योजन चौड़ा एक मैदान है जहां लता पत्ता, गुल्म निकुंज आदि कुछ भी नहीं है। जीव जन्तुओं का निवास भी वहां नहीं है। यहां केवल हरी हरी दुर्वे उगी हुई हैं।

निवध शैल और देवशैल के उत्तर में हजार योजन लम्बी और सौ योजन चौड़ी एक विशाल खण्डमय भूमि है। यहाँ भी वृक्ष लता आदि नहीं। हां, थोड़ा सा पानी, सभी जगह फैला हुआ है। हे ब्राह्मणो, इस प्रकार यह मैंने आप लोगों को इन अनेकों प्रकार से स्तर द्रोणियों को क्रमशः बता दिया जो मेरु के पूर्व में स्थित हैं।

इति श्री वायु महापुराण का भुवन विन्यास नाम का सैंतीसवां अध्याय समाप्त ॥३७॥

* अड़तीसवाँ अध्याय *

(भुवन विन्यास)

अब मैं उन स्थानों का क्रम से वर्णन करूँगा, जहां दक्षिण दिशा की द्रोणियों में सिद्ध योगी पुरुष सदा ध्यान में लीन होकर आसन लगाये रहते हैं। शिशिर और पंतग पर्वत के बीच में एक सुन्दर उदुम्बर वन है। उस वन की चिकनी मिट्टी है ऊँचे ऊँचे शिखर वाले पर्वतों के वृक्षों पर तरह तरह के पक्षि रहते हैं तथा हर ऋतुओं में लाल रंग के पके हुये मीठे फल लगे होते हैं। यक्ष, गन्धर्व देव, किन्नर इत्यादि उन फलों का बहुत खुश होकर सेवन करते हैं वहां पर बहुत मीठे तथा स्वच्छ जल की नदियाँ बहती हैं। और बहुत सरोवर भी वहां पर हैं। उस जगह कर्दम प्रजापति का सुन्दर रहने का स्थान भी है। वहां पर देवता निवास करते हैं वह वन बहुत ही सुन्दर है। उसके चारों तरफ का घेरा सौ योजन का है। ताम्र वर्ण और पतङ्ग पर्वत के बीच एक महान सरोवर है जिसकी लम्बाई चौड़ाई सौ योजन है। उसमें निकलते हुये सूर्य की तरह चमकीला कमल, सहस्र पत्र, महापद्म चारों तरफ खिले हुये हैं। तरह तरह के सुन्दर कमल पुष्पों से उसका जल शोभित हो रहा है। देवता, राक्षस किन्नर इत्यादि उस जल को पीते हैं। उसी के बीच में सौ योजन लम्बा और तीस योजन चौड़ा एक देश है। जो गेरू के रंग की तरह शोभित है उस देश की बहुत बड़ी सड़क हैं जिसकी चारों तरफ दीवारें बन्दनवार से सजी हुई हैं। स्त्री पुरुषों से शोभित उस नगर की सड़क अपनी श्री पर अभिमान करती है। उसके बीच में एक विद्वान ब्राह्मणों का नगर बसा हुआ है उस नगर की ऊँची ऊँची अट्टालिकाऐं एक लाइन में सजी हुई हैं। जिनमें सुन्दर सुन्दर झल्लर लटक रही हैं। उसके महलों की दीवारें मणि और रत्नों से चित्रित की गई हैं। उन विद्वान ब्राह्मणों के स्वामी पुलोमा नाम से प्रसिद्ध हैं। वह तेजवान अनेक आभूषण और मालाओं से ससज्जित रहते हैं तथा उनके चारों तरफ आभूषण से सजे हुये विद्वान ब्राह्म ण

रहते हैं। विशाल और पर्वत के बीच ताम्रवर्ण सरोवर के पूर्व के किनारे पर एक आम का वन शोभित है। तरह तरह के रंगों की उस वृक्ष की शाखायें बहुत बड़ी बड़ी विशाल चारो तरफ को फैली हुई है। जिनमें तरह तरह के मीठे मीठे पके हुये फल लगे हुये हैं। उस आम के फलों को राक्षस गन्धर्व किन्नर इत्यादि बड़े शौक से खाते हैं उस मीठे रस को पीकर वहां के मनुष्य सदैव खुश रहते हैं।

हे ब्राह्मणो ! समूल और वसुधार पर्वतों के बीच में एक बिल्व स्थली है, जो चारों तरफ से एक सी चौकोर अच्छी सुगन्धि से युक्त तथा मीठे फलों से सदा शोभायमान रहती है। उसकी लम्बाई तीस योजन की थी और चौड़ाई पचास योजन की है। उस जगह पक्षी चहचहाते रहते हैं। तरह तरह के लाल पीले रंगों के बेल गिर गिर कर पृथ्वी पर फैले रहते हैं। वहां के मनुष्य, यक्ष, गन्धर्व इत्यादि बहुत से मनुष्य नित्यप्रति बेल गिरि को ही खाते हैं। बसुधार और रत्नधार पर्वतों के बीच में एक पलाश वन है जिसकी लम्बाई सौ योजन तथा चौड़ाई तीस योजन की है। वहां के वृक्ष हर समय हरे भरे तथा रँग विरँगे फूलों से शोभित रहते हैं। फूलों की अच्छी सुगन्धि से वहां का देश हर समय सुवासित रहता है। हजारों योजन तक उसकी सुगन्धि फैली रहती है। उस जगह भगवान सूर्य का एक सुन्दर विशाल महल बना है जहां पर सूर्य भगवान प्रत्येक महीने पर जाते रहते हैं। वहां के सिद्ध पुरुष उन कान्तिमान भगवान सूर्य की पूजा करते हैं। पेचकूट और कैलाश पर्वत के बीच की जो भूमि है उसकी लम्बाई सौ योजन है और चौड़ाई तिरेसठ योजन की है। मनुष्यों के लिये वहां जाने का रास्ता बड़ा कठिन है अतः वहां कोई भी नहीं जासकता है। वहां की भूमि उज्ज्वल और स्वच्छ है। दक्षिण दिशा में उतनी द्रोणियां हैं जिनका हम पहले वर्णन कर चुके हैं। हे ब्राह्मणो ! अब हम आपको जो पश्चिम दिशा में अन्तर द्रोणियां हैं उनके बारे में क्रम से बतायेंगे। सुवक्त्र और शिखिशैल पर्वतों के बीच में एक शिला खण्ड पृथ्वी है जिसका विस्तार

सौ योजन का है वह हमेशा गर्म रहती है। उस अत्यन्त गर्म भयंकर भूमि को छूने से ही मनुष्य कांप उठते हैं। उस शिलाखण्ड के बीच में अग्निदेव का एक विशाल भयंकर स्थान है। विभावसु अग्निदेव बिना ईंधन के ही वहां हर समय जलते रहते हैं।

वहां एक दस योजन लम्बी एक 'मातुलुंगी' नामक स्थली है जो देवादि और गय नामक श्रेष्ठ पर्वतों के मध्य में है। वह वनस्थली सदा मधुमय व्यंजनों और सुरस पके फलों से परिपूर्ण रहती है। वहां ही वृहस्पति का महा पवित्र स्थान है। जो सिद्धगणों से भरा हुआ, सुखद और सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

उसी प्रकार कुमुद और अंजनाचल नामक श्रेष्ठ पर्वतों के बीच में बहुत योजन तक विस्तीर्ण एक केशर द्रोणी है। वहां का वन सभी धातुओं में खिलने वाले कुसुमों से रंगीन और शोभायमान है वहां के खिले हुये फूल डेढ़ हाथ लम्बे चौड़े चन्द्रमा के समान श्वेत रंग के हैं। उनपर सदा मस्त काले भौंरे गूँजते रहते हैं। वहां देवताओं में श्रेष्ठ (गुरु) श्री विष्णु भगवान का एक चमकता हुआ मन्दिर है। जो तीनों लोकों में प्रकाशवान और सब के वन्दनीय हैं।

कृष्ण और पाण्डुर नामक श्रेष्ठ पर्वतों के बीच ६० योजन लम्बा और ३० योजन चौड़ा एक देश है। इस देश में एक चिकनी शिला ही एक छोर से दूसरे छोर तक बिछी है। वहां लता वृक्ष आदि कुछ भी नहीं है। वहां समतल भूमि होने से चलने फिरने वालों को बड़ी सुगमता है। उसके मध्य में एक सरोवर है जहां रमणीय पद्मनी खिली हैं। उसमें असंख्य सहस्रदल कमल खिले हैं जो ऐसे मालूम पड़ते हैं मानो वह सरोवर अनेक छत्रों से अलंकृत है। यह सरोवर मनोहर गन्ध से युक्त महापद्म पुण्डरीक, और खिले हुये शतपत्र, उत्पन्न नीलपत्र एवं मत्तभ्रमर तथा मदमस्त मधुकरों से सदा शोभायमान रहता है। यह पद्मवन सदा कोमल गद्गद कण्ठ वाले किन्नरों के गीतों से सदा निनादित रहता है। यह 'पद्मिनी' स्थल विस्तीर्ण है यक्ष गन्धर्व विचरण करते हैं सिद्धचारण लोग देख रेख करते हैं

इस पद्म वन के बीच पांच योजन की परिधि में अनेक शाखा वाला विशाल न्यग्रोध (वट) का वृक्ष है। वहां असुरों का संहार करने वाले हजार मुख वाले, श्रीमान् नीलाम्बर देव विराजमान रहते हैं। उनकी कान्ति चन्द्रमा के समान है। उनका मुख पूर्ण चन्द्र की सी कान्ति वाला है। वे यक्ष गन्धर्व और विद्याधरों के द्वारा सदा पूजे जाते हैं जो पद्मों से सदा पूजे जाते हैं। यह स्थान सर्वत्र सबलोकों में 'अनन्त सदन' के नाम से प्रसिद्ध है। यह पद्ममाला तथा अन्य पुष्पों की मालाओं से सदा मण्डित है।

सहस्र शिखिर और कुमुद पर्वतों के बीच सौ योजन लम्बा और तीस योजन चौड़ा एक ऊँचा पर्वत शिखिर है जो फैंके गये ऊँचे तीर तक की ऊँचाई वाला है। वह चारों ओर से मधु टपकाने वाले वृक्षों से मण्डित है। वहां अनेकों प्रकार के पक्षी सदा कलरव करते रहते हैं। उन वृक्षों के फल हाथी के शरीर के समान बड़े २ और स्वादिष्ट होते हैं। उस शिखर पर भगवान शुक्राचार्य का आश्रम है। वह आश्रम पवित्र, देव ऋषियों से सेवित और देदीप्यमान तथा विख्यात है। शंकुकूट और वृषभ पर्वत के बीच एक अत्यन्त विस्तार वाला 'परूषक स्थली' है जिसके बेल के समान बड़े बड़े, सुन्दर, सुगन्धित और सुस्वादु परूष फल टट्टनियों से टपक टपक कर वहाँ की भूमिको पंकिल बनाये रहते हैं। चारणगण परूष के रस को पीकर मत्त बने फिरते हैं। इस स्थल में सदा किन्नर उरग तथा साधुगण सदा विचरण किया करते हैं।

कपिंजल और नागशैल के अन्तराल में नाना वनों से विभूषित दो सौ योजन लम्बी और सौ योजन चौड़ी एक मनोहर स्थली है। यहां किन्नर उरग विचरण किया करते हैं। यहां पर सुन्दर, द्राक्षावन नागवन, खर्जूरवन, नीलवन, नील, अशोकवन, स्वादिष्ट दाड़िमों के वन, अखरोट के वन, अतसी-तिलकवन, कदलीबन और स्वादिष्ट बदरीवन हैं। वह स्थल मधुवन और शीतल जल वाली नदियों से अत्यन्त रमणीक है।

पुष्पक और महामेघ पर्वतों के बीच एक पाण्डुर वर्ण की अति समतल जो हथेली की तरह है, एक विस्तृत भूमि है जो सौ योजन चौड़ी और साठ योजन लम्बी है। वहाँ वृक्षलता आदि बिल्कुल नहीं हैं। वहां एक भी जीव जन्तु नहीं है। यह भूमि कठोर और भयंकर है। इसका नाम कानन स्थली है। यहां प्रजापति द्वारा बनाये गये अनेक क्षुद्र सरोवर वन व स्थान हैं। उनकी गिनती नहीं है जो सात आठ दश, बारह योजन की लम्बाई चौड़ाई में हैं। वहां जगह जगह पर अनेक कन्दरायें और घाटियां हैं, जहां कभी भी सूर्य की किरणें नहीं पहुँचपातीं। यहां कोई नहीं जा सकता। हे ब्राह्मणो! वहां कितने ही सरोवर हैं जो पर्वतों की कुक्षि में बने हैं जो संख्या में सहस्रों हैं। इनका जल सदा खौलता रहता है।

इति का 'भुवन विन्यास' नाम का पैंतीसवां अध्याय समाप्त ॥३५॥

उन्तालीसवां अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले–अब हम आपको उस कथा का वर्णन सुनायेंगे, जिसमें पर्वतों के जिन जिन शिखरों पर देवताओं के उत्तम घर बने हुये हैं। उन पर्वतों के बीच में शीतान्त नाम का एक महागिरि पर्वत है। उसमें से तरह तरह के रत्न पैदा होते हैं वह अनेक गैरकादि धातुओं से चित्रित है। उन सब के बीच बहुत से फूलों के ढेर पड़े हुए हैं। वह अनेक तरह के सोने चांदी और मणियों के वासों से चित्रित है। उसके चारों तरफ किनारों पर फूल लगे हुए हैं जिन पर भौंरे गुंजारते रहते हैं। उसकी पृथ्वी सोने और मूँगे से चित्रित है। पर्वत की चोटियों पर लताऐं इधर उधर फैली हुई हैं मालूम पड़ता है कि उन्होने अपने बेल बूटे काढ़ रखे हों, तरह तरह की धातुऐं जमीन पर इस तरह बिखरी पड़ी हैं जैसे जमीन पर चित्र बना रखे हों। वहां के अनेक सरोवरों के पानी मीठे और साफ हैं। वहां की कुञ्जों में फूलों के बहुत झुंड लगे हैं जिनसे वहां की शोभा और भी अधिक बढ़जाती है। वहां की नदियों में फूलों से सजी

हुई नावें बहती हैं। वहां पर बहुत सी गुफाऐं बनी हुई हैं जिनमें किन्नर इत्यादि रहते हैं। अधिक भयंकर सघन वन होने के कारण भी वह बहुत सुखदायी स्थान है। उस जगह अनेक रंगों के तथा मीठे मीठे फलों के बहुत से पेड़ लगे हुए हैं। वहां के सभी जीव जन्तुओं के खाने पीने का साधन है। उस पर्वत के बीच में बहुत सी कन्दरायें बनी हुई हैं। वहां पर बहुत से आश्रम बने हुये हैं। उस जगह श्री इन्द्रदेव का भोग विलास से युक्त एक क्रीड़ावन भी है। तीनों प्रसिद्ध पारिजात वन भी उसी जगह हैं। बालसूर्य की तरह चमकीला और सुगन्धित फूलों से वह पर्वत शोभायमान रहता है। पारिजात वन की सुगन्धि सैकड़ों योजन तक फैली हुई है। उस जगह पर बहुत सी बावड़ियां भी हैं जिनमें स्वर्ण पुष्प खिले रहते हैं। उन कमलों की जड़ें मूँगे की हैं तथा पत्ते हीरों के बने हैं। जिनपर भौंरे गुंजार करते रहते है। वहां बावड़ी का भी पानी सुगन्ध पूर्ण है। और बावड़ियों पर अनेक रंगों के शत पत्र तथा महापत्रों के भी वृक्ष लगे हुये हैं। सोने और मणियों से शोभित हजारों मछलियां पानी में तैरती रहती हैं। और ऐसी ही तरह के बहुत से कछुए भी पानी में इधर उधर घूमते रहते हैं। देवराज इन्द्र के वन में बहुत से पक्षी भी किलोल करते फिरते हैं। उन पक्षियों के पंख रत्न और सोने के फूलों से सजे हुये हैं। और बहुत से पक्षियों की चोंचों से मणि लगे हुये हैं। पक्षियों की चहचहाअट तथा भौंरों के गुंजार से वह वन हर समय शोभित रहता है। इसी कारण उसका क्रीड़ावन नाम पड़ा है। इन क्रीड़ावन के पर्वत मणिमुक्ताओं से चित्रित है। उनके पार्श्व देश सोने के बने हुये हैं और शिखरों से मणियों के छोटे छोटे कण झरते रहते हैं। तरह तरह के बन्दरों से वह वन शोभित है। पारिजात पुष्प के पेड़ हल्की २ हवा से ही फूल बरसाने लगते हैं। इन्द्र के वन में भोग विलास के अनेक स्थान हैं। वहां के सोने के स्थान तरह २ की मणियों शोभायमान रहते हैं। उस जगह न अधिक गर्मी पड़ती है न अधिक सर्दी पड़ती है क्योंकि वहां सूर्य देव हमेशा एकगति में रहते हैं।

तरह तरह की सुगन्धि से पूर्ण वह वसन्त कालीन हवा वहां बहती रहती है। यह हवा सुखदायी है। और दुख दूर करने वाली है।

देवराज इन्द्र के उस सुन्दरवन में देव, दानव,यक्ष, किन्नर, गन्धर्व विद्याधर, सिद्ध और अप्सरायें क्रीड़ा विहार करती हैं, और उस पर्वतराज के पूर्व पार्श्व में कुमुज्ज नाम का एक पर्वतराज है, जिसमें बहुत से झरने और गुफायें बनी हैं। वहीं पर दानवों के आठ पुर बने हुये हैं जिनकी चोटियां तरह की धातुओं से चित्रित हैं। वहां पर अत्यन्त वलवान भंवकर कामरूपी नीलक नाम के राक्षस भी रहते हैं। उन महानील पर्वत पर घोड़े के तरह मुँह वाले किन्नरों के भी पन्द्रह पुर बने हुये हैं। महाबाहु देव सेन और पराक्रमी इन्द्रादि हैं पन्द्रह किन्नर राज वहां के स्वामी हैं। अनेक रंगों के सोने के घेरे से वह नगर चारों तरफ से घिरा हुआ है। उस नगर में हजारों विष धारी अजगर सांप रहते हैं। जिनके देखने से ही विष चढ़ जाता है वे अत्यन्त भंयकर दुर्धुर्ष और क्रोधित होने पर भी अग्नि की तरह क्रान्तिमान होते हैं वे सुवर्ण के वश होते हैं। सर्पों के रहते हुए भी उस पर्वत पर हजारों राक्षस रहते हैं। उनके रहने के निवास स्थान और खिड़कियों पर झल्लर और बन्दरवार लगी हुई हैं।

वेणुमान नाम के पर्वत पर विद्याधरों के तीन नगर बने हुए हैं वह नगर पचास योजन लम्बे और तीस योजन चौड़े हैं। उन तीनों पुरों के इन्द्र के समान तेजस्वी महावली उलूक रोमश और महा नेत्र नामके विद्याधर स्वामी हैं। बैंकंक नाम के पर्वत की चोटी पर गरुड़ जी के पुत्र सुग्रीव का निवास स्थान है वह पर्वत की चोटी अनेक रत्न और धातुओं से चित्रित है उस जगह बहुत से झरने और गुफायें भी हैं। वहां पर अत्यन्त वलवान सुग्रीव वायु, के समान शीघ्र चलने वाले दुर्धुर्ष और सर्पों के निहन्ता गरुड़ पुत्र हैं कंरज्ज पर्वत पर स्वयं भगवान और योगियों के प्रभु वृषभाङ्क भगवान जी निवास करते हैं। उस कंरज पर्वत पर तरह तरह के रूप पखने वाले दुर्धुर्ष प्रथमगण रहते हैं वसुधार हर्वत पर आठों वसु गणों के आठ घर बने हुए हैं।

गिरिवर रत्नधातुओं के ऊपर सप्तर्षियों के सात आश्रम बने हुये हैं। वह आश्रम सिद्धों के भवन से घिरे हुये हैं। हेमश्रृङ्ग पर्वत के ऊपर प्रजापति चतुर्मुखी ब्रह्माजी का रहने का स्थान है। गजशैल पर्वत पर भगवान रुद्र अपने गणों के साथ खुश होकर वहाँ पर रहते हैं। सभी मनुष्य और जीव इनको पूज्यते हैं। शैलेन्द्र सुमेधु तरह तरह की धातु अनेक रंगों से रंगी हैं। उसमें बहुत सी गुफायें, वन और कुंज बनी हुई हैं। वहाँ पर पराक्रमी आदित्य, वसु, रुद्र और अश्विनीकुमार के महल बने हुये हैं। इस पर्वत पर बहुत से सिद्ध देवों के निवास स्थान बने हुये हैं। यक्ष, गन्धर्व, किन्नर रोजाना जिनकी पूजा करते हैं। हेमकक्ष पर्वत पर प्रसिद्ध गन्धर्वों से घिरी एक नगरी बसी हुई है। जो अस्सी देवपुरों की तरह शोभासम्पन्न विशाल आकार की तथा ध्वजा और झल्लरों से शोभित है। अपत्तन नाम के सिद्धगण और युद्ध प्रेमी गन्धर्व वहां रहते हैं जिनके स्वामी राजराज कपिंजल हैं। अनल पर्वत पर राक्षस अधिक रहते हैं, और पंचकूट पर्वत पर दानव रहते हैं। ये राक्षस और अत्यन्त बलवान देवताओं के शत्रु है। शतश्रंग पर्वत पर बलवान यक्षों के सौ पुर बसे हुये हैं। ताम्राभ पर्वत पर कद्रु के पुत्र तक्षक की एक उत्तम पुरी है। स्वामी कार्तिकेयजी का एक विशाल निवास स्थान बना हुआ है। खेतोदर नाम के पर्वतराज पर गरुड़ पुत्र महात्मा सुनाभ का पुर बसा हुआ है। पिशाच नाम के पर्वत पर कुबेर का बहुत बड़ा भवन बना हुआ है। हरिकूट पर्वत पर भगवान हरिदेव का निवास स्थान है। कुमुद पर्वत पर किन्नरों का रहने ना निवास स्थान है। अंजन पर्वत पर उरगगण रहते हैं। कृष्ण पर्वत पर गन्धर्वों का विशाल भवन बना हुआ है। पाण्डुर पर्वत पर विद्याधरों का पुर बसा हुआ है जिसमें चारों तरफ तोरण और झल्लर लगी हुई हैं। सहस्र शिखर नाम के पर्वत पर दैत्यों की सुवर्ण मण्डित सहस्रपुरी बसी हुई है। मुकुट पर्वत पर पन्नगों के बहुत से रहने के स्थान बने हुये हैं। पुष्पक पर्वत पर मुनिगण आनन्द मग्न होकर रहते हैं। सुपक्ष पर्वत पर

वैवस्वत, सोम, वायु और नगाधिप के चार रहने के स्थान बने हुये हैं इन स्थानों पर गन्धर्व, किन्नर, यक्ष, नाग, सिद्ध, विद्याधर इत्यादि अपने अपने इष्ट देवों की पूजा करते हैं ॥

॥ इति श्री वायु महापुराण का भुवन विन्यास नामक
उनतालीसवां अध्याय समाप्त ॥

चालीसवाँ अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले—देवकूट नाम के पर्वत के शिखर पर विनिता के पुत्र सुपर्ण का निवास स्थान बना है। उस क्षेत्र की लम्बाई चौड़ाई सौ योजन की है। उस जगह बहुत से बड़े बड़े महल बने हुये हैं। शाल्मलिद्वीप में पक्षीराज गरुड़ का प्रथम भवन बना है। जिस जगह अत्यन्त बलवान, सर्प निहन्ता शीघ्र चलने वाले बहुत से पक्षिगण रहते हैं। सुन्दर शिखर से युक्त उस पर्वत राज की दक्षिण दिशा में सात तरह के श्रृंग हैं। उनपर देवों के बनाये हुये बहुत से भवन स्थित हैं। उन पर सोने की झल्लर लगी हुई हैं। वहां गन्धर्वों के सात नगर बसे हुये हैं। जिनकी लम्बाई चालीस योजन है और चौड़ाई तीस योजन है। आग्नेय नाम के पराक्रमी कुबरे के अनुचर गन्धर्व उन उत्तम महलों के स्वामी है। हे ब्राह्मणो ! उस भुवन महागिरि के उत्तर शिखर पर देवों के शत्रु सैंहिकेयो का निवास स्थान है। उस नगर का विस्तर तीस योजन का है। वहां पर बहुत सी अट्टालिकाऐं बाग और वन है। उनके चारों तरफ झल्लर तोरण लगे हैं, सैंकड़ों तरह के बाजे बजते रहते हैं जिससे बगीचों में खुशी की लहर फैली रहती हैं। देवकूट पर्वत पर स्थित वह नगर सिद्ध और देवर्षियों का विहार स्थल है। ब्राह्मणों ! दूसरे मर्यादा नाम के पर्वत पर तरह तरह के वर्ण के विशाल भवनों के समूह से युक्त कालिकेय नाम के असुरों का एक दुर्गम नगर है। वहां पर सुवर्ण और मणियों से चित्रित अनेक भवन और बड़े बड़े राजपथ हैं। वह हर समय नर नारियों से भरे रहते है। वह नगर सौ योजन लम्बा और साठ योजन

चौड़ा है। सुनास नामका पर्वत महा मेघ की समूह की तरह जान पड़ता है। उसी के दक्षिण शिखिर पर औत्कम्ब नाम का पर्वत है। उस पर्वत पर राक्षसों का निवास स्थान है, उसकी लम्बाई बासठ योजन की है और चौड़ाई बीस योजन की है। उस पुर में सोने की तोरण और पताका लगी हुई हैं। जो देवकूट पर्वत के बीच शिखर पर स्थिति हैं, वह सोने और मणियों की शिलाओं से चित्रित है। उस महापुर के ऊँचे ऊँचे विशाल महलों में सौ सौ और हजार हजार डगों की सीड़ियां हैं। उसी देवकूट पर्वत पर एक विशाल भूतवट नाम का वृक्ष है, जिसके चिकने पत्ते हैं उसकी जड़ें विशाल हैं और बहुत से तने तथा घनी छाया है। उस भूतवट वृक्ष के चारों तरफ जीव रहते हैं उस जगह भगवान शंकर का भास्वर नामका प्रसिद्ध स्थान है। उस स्थान में सूअर, भालू हाथी, बकरे के मुँह वाले बलवाल तरह तरह के वेश बदलने वाले राक्षस, भूतप्रेत इत्यादि निवास करते हैं। उस जगह भूतगण भगवान महादेव जी की नित्य पूजा करते हैं। तरह २ के बाजे नगाड़ों और ढोलों को बजाकर प्रमथादि गणेश्वर वहां महादेव जी की पूजा करते हैं। उस स्थान पर स्वयं भगवान महादेव जी की सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष, नाग सदा पूजा करते हैं।

इति 'भुवन विन्यास' नाम का चालीसवां अध्याय समाप्त ॥४०॥

एकतालीसवां अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले—देवकूट पर्वत के सुन्दर शिखर पर कैलास पर्वत बसा हुआ है। उसकी लम्बाई सौ योजन की है और चौड़ाई पचास योजन की है। इसका शिखर शंख की तरह सफेद शान्त और सुन्दर है। बहुत से अच्छे भक्त वहां रहते हैं। वहां एक बहुत बड़ा नगर बसा हुआ है जो सुवर्ण और मणियों से चित्रित है। वह नगर धनाधिपति कुवेर का है। उस नगर में शत्रु आक्रमण नहीं कर सकते, वह सब जगह से सुरक्षित वैभव सम्पन्न नगर है। उस नगर के बीच में अनेक स्तम्भ वाला, ध्वजा से युक्त बहुत तरह के सोने से सजी हुई

एक मनोहर विपुला नामक सभाभवन है। उसी जगह पर एक सुन्दर महाविमान है। जो तरह तरह के रत्नों से शोभित है। जिसकी इच्छा से सभी वस्तुऐं शीघ्र मिल जाती हैं। अपनी इच्छा मात्र से चलने वाला और सोने के तारों से मढ़ा हुआ है। इसी विमान पर चढ़कर धनाधिपति कुबेर देव सवारी करते हैं। उस जगह में भूतों के पूज्य एक पिंगल यक्षेन्द्र देव स्वयं निवास करते हैं, जो भगवान महादेव जी के सखा हैं। वह उत्तम देव कुबेर, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, धारण और अप्सराओं के साथ सुख पूर्वक निवास करते हैं। धनाधिपति कुबेर की सभा में आठ दिव्य महानिधि स्थिति है जहां रत्न संचित रहते हैं। पद्म महापद्म, मकर, कच्छप, कुमुद, शंख, नील और निधि श्रेष्ठ नन्दन इत्यादि आठ महानिधि है। वहां ही कुबेर का निवास स्थान है। उसी जगह के पास इन्द्र, अग्नि, यम इत्यादि देवताओं और अप्सराओं के निवास स्थान है। सब से पहले गण यक्षेन्द्र की पूजा करके उनके पीछे चलते हैं। वहां एक अत्यन्त धीरे बहने वाली मन्दाकिनी नदी भी है। जिसमें मणियों के घाट बने हुये हैं। वहां पर तरह२ के फूलों के वृक्ष लगे हुये है। उसमें यक्ष, गन्धर्वों की स्त्रियां तथा अप्सरायें स्नान करती हैं। उस मन्दाकिनी नदी के जल को देव दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और पन्नग पिया करते हैं। यह गन्ध स्पर्श के गुणों का महापद्मों से सदा सजी रहती हैं। इसके अलावा अलकनन्दा और नन्दा नाम की दो और नदियां भी वहां बहती हैं। जो सुधा के समान जल से युक्त हैं। जिसको देवर्षि जन पान किया करते हैं। इस पर्वतराज के पूर्व शिखिर पर गन्धर्वों के दस नगर हैं जो हजार योजन लम्बे तथा तीस योजन चौड़े हैं। उन गन्धर्वों के नगरों के वैभव का क्या ठिकाना है। वहां पर बड़े बड़े नगरों का क्या ठिकाना है। ये संख्या में संकड़ों हैं। वहां पर महापराक्रमी तपे अङ्गार की सी कान्ति वाले, सुबाहु, हरिकेश, चित्रसेन और जर आदिक दस गन्धर्व राज निवास करते है। यह समस्त स्थान ८० योजन लम्बा और तीस चौड़ा है। यहां ही महाशयों के तीस भवन सम्पूर्ण सिद्ध हैं।

उन भवनों में सदा आनन्द की धारा बहती रहती है। महामाली, सुनेत्र और मणीवर तीस यक्षराज महाशय वहां के उदार स्वामी हैं। वायु और अग्नि के समान तेजस्वी इन यक्षों के अधिपति श्री सम्पन्न वैश्रवण हैं। इसी कैलास के दक्षिण भाग में पर्वत राज हिमालय स्थित है। जिसमें कि ने ही कुंज हैं। वहां झरनों और गुफाओं की कोई गिनती नहीं हैं। वहां मैदान चोटी तथा सरितायें भी बहुत हैं।

यह हिमालय पूर्वी समुद्र से लेकर पश्चिमी समुद्रतट तक फैला हुआ है। इसमें जहां तहां किन्नरों के नगर भी बसे हैं जो सौ के लगभग हैं। ये सब नगाधिराज हिमालय के मध्य में बसे से हैं। यहां के स्त्री पुरुष सदा प्रसन्न रहते हैं। सभी प्रजा हृष्ट पुष्ट है। द्रुम, सुग्रीव, सैन्य, भगदत्त आदिक प्रमुख सौराजा इनके अधिपति हैं इस पर्वत पर महादेव जी का उमा के साथ व्याह हुआ था। भगवती उमा देवी ने यहां पर ही कठोर तप किया था। महादेव जी ने भी किरात के रूप में यहां पर ही क्रीड़ा की थी। यहां से ही महादेव और पार्वती जी ने समस्त जम्बूद्वीप का अवलोकन किया था। यहां पर महादेव जी की क्रीड़ा भूमि सदा नाना प्रकार के फल फूलों से सम्पन्न तथा भूतगणों से युक्त और आनन्द प्रद है। इस शैल प्रदेश में सदा मनोहारिणी, सुन्दर नेत्र वाली, कृशोदरी किन्नरियां रमण किया करती हैं। यहां पर विशाल नेत्र वाले यक्ष गन्धर्व और सुन्दर अप्सरायें विहार करते हैं। जहां पर भगवान शंकर ने आधेशरीर से नारी और आधेशरीर से नर का रूप धारण किया था वहां पर ही 'शरवन' है और वहीं कार्तिकेय जी उत्पन्न हुये थे। कार्तिकेय जी ने यहीं अपनी शक्ति चलाई थी। यहीं पर इन्द्रादिक देवताओं ने उन्हें देव सेनापति बनाया था। और यहीं उनका अभिषेक भी किया था। यहां कार्तिकेय जी का एक सुन्दर ध्वज पताका से युक्त, किंकणी जाल से सुशोभित एक 'सिहंरथ' है। हे विप्रो! भूतगणों से युक्त स्वामी कार्तिकेय जी के यहाँ पर अनेक स्थान हैं। यहां पर हिमालय

के पृष्ठ भाग में कुमार की एक क्रीड़ा भूमि है जिसे 'पाण्डु शिला' कहते हैं। इसके पूर्वी भाग में सिद्धों का निवास है। जिसे विद्वान लोग 'कलाप ग्राम' कहते हैं। सूकरोड, भरत, वशिष्ठ, नल विश्वामित्र, उद्दालक आदि अनेक ब्रह्मर्षियों के यहां आश्रम हैं यह गिरराज अनेक प्रकार के रत्नों की खानों से युक्त है तथा अनेक नदियां यहां से निकली हैं। नाना प्रकार के जीव जन्तु यहां पर निवास करते हैं।

हे विप्रो! अब हम पश्चिम के 'निषध' नामक पर्वत का यथार्थ में वर्णन करेंगे। इसके मध्यम शिखर पर विष्णु भगवान का एक चमकीला मन्दिर है जो स्वर्ण से विभूषित है। यह स्थान यक्ष गन्धर्व अप्सरा आदि से व्याप्त है। यहां साक्षात् पीताम्बर धारण किये हुये भगवान हरि निवास करते हैं। जो वरदान देने वाले और सृष्टि कर्त्ता हैं। सिद्ध लोग सदा उनकी सेवा किया करते हैं। उसी निषध पर भीतरी भाग में उल्लंघी नामक राक्षसों का एक नगर है। वहां चांदी सोने के द्वार तथा तोरण लगे हैं। वहां के कोठे और महल खरे स्वर्ण की भांति चमकते रहते हैं। स्थान स्थान पर अनेक सुन्दर वाटिकायें हैं। वह नगर सर्पों से सदा भरा पूरा है। द्वार पर सर्प ही रखवाली करते हैं। यह नगर तीस योजन विस्तार वाला है। और सदा हरा भरा आनन्दमय है। इसी के दक्षिण भाग में बहुत से दैत्य निवास करते हैं। यहां एक 'दुष्प्रवेश्य' नगर है। इसमें प्रवेश करने का मार्ग एक गुफा है। उस पर्वत की महातट भूमि पर एक सोमशिला है। जहां प्रत्येक माम में चन्द्रमा उतरा करते हैं। ऋषि, किन्नर गन्धर्व दानव आदि तारापति चन्द्रमा की उपासना किया करते हैं। वह पर्वत शिखिर ब्रह्मपार्श्व कहलाता है वह सुरश्रेष्ठ ब्रह्मा जी का स्थान कहा जाता है। वहाँ सभी लोग ब्रह्मा जी को नमस्कार किया करते हैं। यहीं वह्नि देव का निवास स्थान है। उत्तर भाग में त्रिकूट पर भूत सिद्ध ऋषि लोग निवास करते हैं। वहां ही हेमचित्र नामक एक विख्यात नगर है। वहां तीनों देवों के तीन स्थान हैं। बवेलशाली दैत्य दानव गन्धर्वों द्वारा सदा पूजे जाते हैं। उसी के उत्तर में जातुधि नामक

देव पर्वत हैं। जिसकी अनेक चोटियां हैं। जहां साधु निवास करते हैं यहीं रमणीक आनन्द सरोवर है। जो सदा निर्मल जल से पूर्ण रहता है। यह तीस योजन लम्बा चौड़ा है। यह सुन्दर घाट और कमल आदि से अत्यन्त मनोहर है। वहां 'चण्ड' नामक अत्यन्त भयंकर नागपति निवास करते हैं। वे महाभाग सौ फन वाले हैं जिन पर विष्णु के चक्रों के चिन्ह बने हैं।

इस प्रकार इन आठों को वि चित्र देव पर्वत समझना चाहिये। ये विस्तृत पर्वत, पुण्यात्मओं से परिपूर्ण हैं। ये मेरु के केसर की तरह बिखरे हुये ये पर्वत जाल ही सिद्ध लोक कहलाते हैं। ये विचित्र अनेक आश्रम युक्त और पुण्यात्माओं के विहार स्थल हैं। यह उदार कर्मा सिद्धों की मध्यमा प्रतिमा है। यह मेरु ही स्वर्ग कहलाता है। उसके स्थान क्रम का वर्णन इस प्रकार किया गया। अनेक वर्ण, भक्ष्य अन्न, पान, आच्छादन, भूषण और भांति भांति के प्रजाजनों से युक्त यह पृथ्वी चार द्वीपों वाली कहलाई गई है। ये भद्र, भरत, केतुमाल और उत्तर कुरु नामक चार महाद्वीप है। इनमें पुण्यात्मा लोग निवास करते हैं। हे ब्राह्मणो! हमने इस प्रकार चारों महाद्वीपों और अनेक द्वीपों से युक्त बताकर सम्पूर्ण पृथ्वी का वर्णन किया। इस प्रकार की उत्तरद्वीप, शैलवन, कानन से युक्त अत्यन्त विस्तार वाली यह पृथ्वी 'पद्म' कही गई है। ब्रह्मलोक, देवलोक तथा मनुष्य लोक तक यह सब त्रिलोक कहा जाता है। सूर्य चन्द्र से आलोकित और रूप रस, गन्ध, स्पर्श आदि से युक्त यह सब जगह कहा गया है। इसको पद्म कहा गया है। सभी पुराणों में पृथ्वी के वर्णन का क्रम इसी प्रकार से किया गया है।

॥ इति भुवन विन्यास नामक एकतालीसवां अध्याय समाप्त ॥

ब्यालीसवाँ अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले—हे ऋषियो! अब मैं पवित्र जलवाली देवनदियां और गम्भीर जलवाली अन्य नदियों का यथाक्रम वर्णन करूँगा जो सरोवरों से निकली हैं। सो सुनिये। जो सब जीवों के आधार है और

जो देवताओं के सुधारक है, जो आकाश समुद्र के चन्द्र माने जाते हैं उन्हीं से एक निर्मल जलवाली पुण्यसलिला नदी निकल कर सप्तम वायुपथ की ओर चली गई है। वह नदी ग्योतिष्मराड़ल तक बहती है। वह करोड़ों तारिकाओं तथा पिण्डों से घिरी है। देवराज इन्द्र के ऐरावत द्वारा आकाश में जाकर इस नदी का जल क्रीड़ास्थल में विक्षुब्ध होजाता है। विमानों पर चढ़कर जब सिद्ध पुरुष विहार करते है तो इस नदी के जल का आचमन करते है। जिस प्रकार सूर्य देव रोजाना घूमते रहते हैं उसी प्रकार यह नदी भी वायु से लक्षित होकर जगह जगह बहती रहती है। इस नदी का विस्तार चौरासी योजन का है। यह नदी हर समय मेरु पर्वत के चारों तरफ परिक्रमा की तरह घूमती रहती है। अपने तेज बहाव के कारण जगह जगह घटती बढ़ती मेरु पर्वत चार उत्तरीय शिखरों पर गिरती है और मेरु पर्वत के ऊँचे शिखरों से टकराकर जब वह दुबारा लोटती है तो इसका जल छिन्न भिन्न हो जाता है, जिसके कारण यह चार भागों में अलग २ होकर बहती है। मेरु पर्वत के चारों तरफ साठ योजन तक यह पवित्र नदी बिना किसी सहारे के आकाश में बहती हुई मेरु के निचले भाग में चार भागों में बटकर अपने विशाल सुन्दर रूप में मन्दर पर्वत के पूर्वी भाग में गिरती है। यह पवित्र नदी पूर्वी भाग में रहते वाले सिद्ध, देवों के स्थान, झरने, कन्दराओं तथा मेरु पर्वत के सुन्दर कंदरा वाले मन्दर पर्वत को और वन देवों के दुख को मिटाने स्फटिक मणि की तरह स्वच्छ निर्मल जल वाली नदी चारों तरफ से पृथ्वी को सींचती हुई अरुणोद सरोवर में गिरती है। इसके बाद वही आकाश में घूमने वाली नदी अरुणोद सरोवर से निकल कर सुन्दर निर्झर वाले शीतान्त शैल पर गिरती है। इसी कारण इस का सब नदियों में पूज्य सीता नाम पड़ा है। जगह जगह बहती हुई फिर निकुंजों में जाकर जगह २ रुकने से उसकी कई धारायें हो जाती हैं। शीतान्त पर्वत से निकलकर वह नदी मुंकुज पर्वत पर गिरती है। फिर मुकुंज पर्वत से निकल यह नदी सुमज पर्वत पर गिरती है माल्यवान पर्वत पर गिरती हुई वैकुक पर्वत पर मिलती है वैकक पर्वत से मणिशैल में गिरती है

और फिर मणि शैल पर्वत से बहुत सी गुफाओं में होती हुई ऋषभ पर्वत पर गिरती है इस तरह हजारों योजनों से बहती हुई यह पवित्र नदी बहुत से सिद्धों के निवास स्थान वाले जठर पर्वत राज पर जाकर गिरती है। वहां से भी आगे चल कर यह पवित्र नदी देवकूट पर जाकर गिरती है। देवकूट पर्वत का पार्श्व भाग समुद्र तक फैला हुआ है। इसी तरह यह पवित्र नदी नियमानुसार क्रम से पृथ्वी पर उतरती है यह पवित्र नदी हजारों स्थलियों, पर्वतों, बहुत से वनों में और तरह तरह के सरोवरों से मिलती हुई हजारों नदियों के साथ एक होकर निर्मल पवित्र जलधार होकर बहती है। यह पवित्र नदी जगह २ बहती हुई मुख्य मुख्य द्वीपों तथा भद्राश्ववर्ष को सींचती हुई पहले पूर्व सागर में गिरती है। दक्षिण दिग्वर्ती गन्धमादन पर्वत पर जो नदी बहती है, वह अलकनन्दा नाम से प्रसिद्ध है। वह नदी देवराज इन्द्र के नन्दनवन में बहती हुई, और गन्धमान पर्वत के चारों तरफ बहती हुई, देवों के मानसरूप उत्तर मानसरोवर में गिरती है। वहां से आगे चलकर तीन शिखर वाले सुंदर त्रिकूट पर्वतराज पर गिरती है इसके बाद त्रिकूट पर्वत से कलिंग पर्वत पर गिरती है। वहां से बढ़ कर रुचक पर्वत पर गिरती है। रुचक पर्वत से निषध पर्वत पर मिलती है, फिर निषध पर्वत से ताम्राभ पर्वत पर गिरती है। ताम्राभ-पर्वत से श्वेतोदर पर्वत पर गिरती है। वहां से आगे बढ़कर सुमूल पर्वत पर गिरती है, सुमूल पर्वत से वसुधार पर्वत पर, वसुधार पर्वत से हेमकूट पर्वत पर हेमकूट पर्वत से देवश्रंग पर्वत पर, देवश्रंग पर्वत से पिशाचक पर्वत पर पिशाचक पर्वत से पंचकूट पर्वत पर और पंचकूट पवत से कैलाश पर्वत पर गिरती हुई अचलोत्तम पर्वत पर गिरती हैं। यह पवित्र विशाल महानदी हजारों पवतों के बीच में होती हुई जगह २ पृथ्वी को सींचती हुई हजारों कन्दराओं के बीच होती हुई दक्षिण समुद्र में जाकर मिलती है।

और जो दूसरी नदी है वह शैल कुक्षि में घिरी काफी विस्तार में फेली हुई है। जिस नदी को भगवान शंकर ने अपने सिर पर

धारण किया है वह घोर पापों को नष्ट करने वाली भगवान शंकरजी के अंगों से स्पर्श होकर पवित्र नदी का नाम गंगा नदी पड़ा है। हे ब्राह्मणो ! यह पवित्र नदी हिमालय पर्वत के चारों तरफ बहती हुई अलग अलग कई भागों में बट गई है। यह नदी अलग अलग नामों में हजारों नदियों के रूप में प्रसिद्ध है। जिन जिन देशों में यह नदी बहती हुई पार करती है तथा देव, मनुष्य, सिद्ध इसकी पूजा करते हैं वह देश और मनुष्य बहुत ही भाग्यशाली हैं।

अब हम उस कथा का विस्तार से वर्णन करेंगे, जिसमें मेरु पर्वत के पश्चिम दिशा में जो पर्वत बने हुये हैं। वह तरह तरह के रत्नों से शोभित हैं। जिस नदी को भगवान शंकर ने सिर पर धारण किया है वह नदी लता की तरह घूमती हुई मेरु के श्रंग पर गिरती है। मेरु पर्वत के चारों तरफ बहती हुई देवभ्राज वन में गिरती है। तरह तरह के पुष्पों से युक्त निर्मल जल वाली नदी देवभ्राज, महाभ्राज, और वैभ्राज्य महावनों के चारों तरफ बहती हुई सितोद सरोवर में गिरती है। सितोद सरोवर से आगे चलकर सुपक्ष पर्वत पर गिरती है। देवर्षियों द्वारा पूजित वह पवित्र नदी सुपक्ष पर्वत से गिरकर शिखिर-पर्वत पर गिरती है। शिखिर पर्वत से कंकपर्वत पर गिरती है और कंक पर्वत से वैदूर्य पर्वत पर गिरती है। इस तरह यह नदी जगह-जगह हजारों पर्वतों, वनों और कन्दराओं को आच्छादित करती हुई बहुत नदियों के जल से मिलकर पर्वतराज पारिजात पर गिरती है। बहुत सी गुफायें झरने और कन्दराओं से शोभित पारिजात पर्वत के बीच में होकर बहती है वह गण्डशलों से टकराती हुई पृथ्वी पर आती है और वहाँके मलुच्छों के आवास स्थान केतुमाल महाद्वीप को सींचती हुई पश्चिम समुद्र में गिर जाती है। फिर ये नदी आगे बढ़कर भद्रसोमा नाम से प्रसिद्ध होती है। यह भद्रसोमा नदी बहुत विस्तार में फैली हुई है। यह तेज बहने वाली नदी शंखकूट तट के बहुत से निर्झर और वनों को पार करती हुई शंखकूट गिरि के तट पर गिरती है फिर वहां से आगे बढ़कर नागशैल पर गिरती है।

नागशैल पर्वत से वृष पर्वत नील पर गिरती है। फिर वहां से आगे चलकर यह नदी कपिंजल पर्वत पर गिरती है और कपिंजल पर्वत से नीचे की तरफ इन्द्रनील पर्वत पर बहती है इन्द्रनील पर्वत से हेमश्रृंग पर्वत पर गिरती है। हेमश्रृंग से खेत पर्वत पर गिरती है। खेत पर्वत से सुनग पर्वत पर और सुनग पर्वत से वह नदी शतश्रृङ्ग पर्वत पर गिरती है। शतश्रृंग से आगे चलकर फूलों से घिरे पर्वतराज पुष्कर में गिरती है। पुष्कर पर्वत से आगे चलकर द्विजराज पर्वत पर गिरती है। वहां से बढ़कर वराह पर्वत पर गिरती है वराह पर्वत से शिलोच्च मयूर पर गिरती है शिलोच्च मयूर से अनेक गुफाओं वाले एक शिखर जानुधि नामके पर्वत पर गिरती है। इस तरह यह नदी सैंकड़ों पर्वतों को सींचती हुई संयुक्त त्रिश्रृंग पर्वत पर गिरती है त्रिश्रृंग पर्वत से आगे चलकर मेरुकूट के तट से भी आगे चलती है और फिर ये निर्मल जल वाली पवित्र नदी वीरुध पर्वत पर गिरती है। वहां के देश को भिगोती हुई यह नदी पश्चिम समुद्र में गिरती है।

मेरु के उत्तर पार्श्व में सुपार्श्व नामक नानाजीव संकुल सुवर्णमय पाद देश में बह, कई भागों में अलग होकर बहती है। इसके बाद कन्दराओं के बीच से निकल कर वह पवित्र नदी फूलों की विचित्र नौका को धारण करती हुई पृथ्वी पर उतर कर उत्तर कुरु को भिगोती हुई महाद्वीप के बीच में बह कर उत्तर समुद्र में जाकर गिरती है। इस तरह ये निर्मल जल वाली चारों नदियां महागिरि तट से निकल कर चारों दिशाओं में बहती हैं ब्राह्मणो हमने आपसे पृथ्वी की कथा का वर्णन किया है। यह पृथ्वी मेरु इत्यादि पर्वतों से चारों तरफ से घिरी है। इसमें चार महाद्वीप हैं चार क्रीड़ाकानन हैं। इसमें केतुस्वरूप चार महावृक्ष और सरोवर भी हैं। इस पृथ्वी पर चार महाशैल हैं और आठ उत्तर महाशैल हैं। यह पृथ्वी चार महानागों के ऊपर ठहरी हुई है और यह आठ अवर पर्वतों से युक्त है।

इति भुवन-विन्यास नामका ब्यालीसवां अध्याय समाप्त ॥ ४२ ॥

तैंतालीसवां अध्याय (भुवन विन्यास)

सूतजी बोले– हे ऋषियो ! गन्धमादन पर्वत के किनारे में एक गण्ड शिला है पूरब पश्चिम में यह बत्तीस हजार योजन तक फैली हुई इसका विस्तार चौंतीस हजार योजन में है। वहाँ केतुमाल के शुभ कर्म करने वाले प्राणी रहते हैं। वहां के पुरुष बलवान महावीर्यशाली और काले रंग के होते हैं लेकिन इनकी स्त्रियां सुन्दर और कोमल होती हैं। वहां पर कटहल का एक बहुत बड़ा पेड़ है। इस वृक्ष के फलों का स्वाद छओं रसों का होता है। वहां के रहने वाले इस फल के रसों को हजारों वर्ष तक पीते रहते हैं। माल्यवान पर्वत के दूसरे भाग में दूसरी पूर्व गण्ड शिला है। इसकी लम्बाई चौड़ाई भी उतनी है जितनी कि पहली की है। भद्राश्व देश के रहने वाले मनुष्य हर समय प्रसन्न दिखाई देते हैं उस जगह भद्र नामका एक साल वन प्रसिद्ध है इसके वृक्षों का कालाम्र नाम है। वहां के पुरुष गौर वर्ण के बहुत बलवान और महावीर्यशाली होते हैं। स्त्रियां भी सुन्दर और गौर वर्ण की होती हैं। ये स्त्रियां चन्द्र के समान कान्ति वाली, पूर्णमा-चन्द्र की तरह मुख वाली होती हैं यहां मनुष्य स्वस्थ होकर बिना किसी रोग के दस हजार वर्ष तक जीते हैं और कालाम्र के रस को पीते हैं। ऋषियों ने कहा– हे सूतजी आपने इन चारों द्वीपों के निवासियों के वर्ण, आयु और प्रमाण की कथा को हमें सूक्ष्म रूप से बताया है। सूतजी बोले–हे ऋषियो ! अब हम भद्राश्व के रहने वालों के स्वरूप का वर्णन विस्तार में आपको सुनायेंगे देवकूट गिरि के पूर्व की ओर से चारों ओर वर्तमान पांचों पर्वतों, नदियों, देशों का वर्णन हमने आप को बतादिया है। शैवाल, वर्णमालाग्र, कोरज्ज, श्वेत और नील ये पांच पर्वत हैं। इनके सतानों के रूप में सैकड़ों पर्वत और हैं। इन पर्वतों से मिले कितने ही देश हैं वहां पर बहुत से जीव और तरह २ जाति के मनुष्य रहते हैं उनका पालन पोषण राजा करते हैं। पर्वतों के बीच जो देश बसे हैं वे ये हैं सुमंगल, शुद्ध, चन्द्रकांत, नील मौलेये, सौवीर, विजयस्थल, महास्थल, सुकाम, महाकेश, वातरंह, सोपासंग, आदि बहुत से देश हैं इन देशों के मनुष्य महानदी गंगा का जल पीते हैं।

यह प्रसिद्ध गंगा नदी पहले शीता नाम से प्रसिद्ध थी। गंगा नदी की तरह वहाँ बहुतसी महानदी बहती हैं। ये नदियां नायिकानामसे प्रसिद्ध हैं जिसतरह चक्रा, महाचक्रा हंसवति, कांची, वक्रा, सुरसा, शाखावती, इन्द्रनदी, मेघा, कावेरी इत्यादि बहुत सी महानदियां हैं। हमने आपको पूर्व द्वीप में बहने वाली नदियों का वर्णन सुनाया है। वह भद्राश्ववर्ष देश धान्य है, जिसमें तरह तरह के वृक्ष, घने वन और अनेक पर्वत हैं। वहां की स्त्रियां हर समय खुश होकर मंगल गान किया करती हैं। भद्राश्ववर्ष में बहुत राजा राज्य कर रहे हैं वहां सदा फूलने फलने वाले बहुत से वन हैं। वहां हीरे मोतियों, बहुमूल्य रत्नों की बहुत सी खानें भी हैं यहां के पुण्यशाली मनुष्य देवताओं के साथ रहते हैं। उनका दर्शन प्राप्त करते हैं। वह दस हजार वर्षों तक जीते हैं। वे शुरू से ही सत्यव्रती और किसी भी जीव की हिंसा न करने वाले होते हैं वे श्रद्धा सहित भगवान शंकरजी की तथा भगवती गौरी की आनन्दित होकर पूजा करते हैं।

॥ इति श्री वायु महापुराण का तेंतालीसवां भुवन विन्यास नामक अध्याय समाप्त ॥

चौवालीसवाँ अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले–हे ऋषियो ! मैंने आपको भद्राश्ववासियों का यह स्वाभाविक वर्णन सुनाया है अब मैं केतुमाल देश के रहने वालों का वर्णन आपको सुनाऊँगा। पश्चिम दिग्वर्त्ती निषधाचल पर्वत से पश्चिम दिशाओं में जो सात कुल पर्वत, नदियां, और देश हैं, उनका हाल सुनिये। विशाल, कंबल, कृष्ण जयन्त, हरिपर्वत, अशोक और वर्धमान ये सात पर्वत हैं। इसके समान रूप सैकड़ों हजारों पर्वत और भी हैं। इन पर्वतों से घिरे बहुत से देश हैं। उन देशों में कई तरह की जाति के मनुष्य रहते हैं। उन प्राणियों का पालन-पोषण राजा करते हैं। पर्वतों के बीच जो देश बसे हैं उनके कुछ नाम ये हैं। सुख, भ्रमर, यूथ के माहेय अचलकूटक, सुमौल, स्तावक, क्रौंच, कृष्णांग, मणिपुंजक, कूटकवल, मौषीयकुंटभव इत्यादि बहुत से देश हैं

ये देश गौ, मनुष्य, कपोतों और पक्षियों से भरे हुये हैं। यहां के भाग्यशाली मनुष्य इन पर्वतों से निकली पवित्र नदियों का जल पीते हैं यहां की जो नदियां हैं उनके नाम ये हैं। कंबला, तामसी, श्यामा सुमेधा, वकुला, विकीर्णा, शिखिमाला, दर्भावता, भद्रानदी, शुक्लनदी, पलाशा, महानदी, भीमा, कोची, पुण्या, कुशावती, दशा, शाकवती, कालिन्दी, पुरायोदा, भारती, ब्राह्मी, विशाला पीवरी, कुंभकारी, रुषा महिषी, दराड़ा; और नदनदी इन नदियों के जल को वहां के मनुष्य पीते हैं। ये नदियां पापों को नष्ट करने वाली पुण्यमयी हैं। वह पश्चिम दिगवर्ती महाद्वीप केतुमाल देश में सतगुणी मनुष्य रहते हैं ये देश अनेक तरह के धन धान्यों से भरा हुआ है। यह देश महा-नदियों से, तरह तरह के रत्नों से सदा आनन्दमय, नित्य सुखकारी प्रसिद्ध देश है। मैंने आप लोगों को केतुमाल देश के रहने वालों के चरित्र का वर्णन सुनाया है। वह शुरू से ही प्रसिद्ध कथा है।

॥ इति श्री वायुमहापुराण का चौवालीसवां भुवनविन्यास नामक अध्याय समाप्त ॥

* पैंतालीसवाँ अध्याय *

(भुवन विन्यास)

शाशपायन ने कहा–हे प्रभो! आपने हमको पूर्व-पश्चिम दिशा के दो देशों का वर्णन सुनाया है। अब आप हमको उत्तर दक्षिण दिशा के देशों का और वहां के रहने वालों का पूर्णरूप से वर्णन सुनाइये।

सूतजी बोले–अब हम आपके कहे के अनुसार वर्णन करेंगे। आप सब ध्यान पूर्वक सुनिये श्वेत पर्वत के दक्षिण और नील पर्वत के उत्तर में रमणक नाम का एक देश है। उस जगह जो मनुष्य पैदा होते हैं। वे सभी अनुकुल कामफल का प्रयोग करतेहैं। वे न तो बूढ़े होते है और न उनके शरीर से बदबू आती है। वह अपने परिवार सहित स्वस्थ और सुन्दर रहते हैं। वहां पर रोहिण नामक एक विशाल वट का पेड़ है वहां के मनुष्य उस वट वृक्ष के फलों के रस

को पीते हैं। वे मनुष्य दस हजार दस सौ पांच वर्ष तक जीवित रहते हैं। श्वेताचल के उत्तर में और श्रृंगाचल के दक्षिण में हिरण्मत नाम का एक देश है, जहां हैरण्वती नदी बहती है। वहां के मनुष्य बलवान, धनी, सुन्दर और सभी मौसम में कामफल का प्रयोग करने वाले हैं। वहां के मनुष्य ग्यारह हजार दस सौ पांच वर्ष तक जीते रहते हैं। उस देश में एक बहुत बड़ा बड़हर का पेड़ है जिसके फलों से छओं रसों का स्वाद मिलता है। वहां के मनुष्य उसी के रसों को पीते हैं। वहां श्रृंगवान पर्वत के तीन बड़े ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं। एक पर्वत मणि का है दूसरा पर्वत सोने का है तीसरा पर्वत अनेकों तरह के रत्नों से भरा है। उन पर्वतों पर महल बने हुये हैं। उत्तर समुद्र के अखिर में दक्षिण की तरफ कुरुवर्ष है जो सिद्ध मुनियों से पूजित है। वहां के वृक्षों में तरह तरह के सुगन्धित फूल लगे होते हैं और उनके वृक्षों में मीठे मीठे फल लगे रहते हैं। उन वृक्षों में फलों के साथ साथ कपड़े तथा आभूषण मिलते हैं और बहुत से वृक्ष वहां पर ऐसे हैं जो सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले होत हैं। और बहुत से वृक्षों से मधु की तरह मीठे फल टपकते रहते हैं। दूध देने वाले भी बहुत से वृक्ष वहां पर होते हैं। और वह वृक्ष हर समय अमृत के समान दूध देते रहते हैं। वहां की पृथ्वी मणियों से घिरी रहती है और वहां सोना बालू की तरह बिखरा रहता है। देवलोक से निकलने के बाद मनुष्य वहां पर जन्म धारण करते हैं। वहां की स्त्रियां दो दो जुड़वां बच्चे एक साथ पैदा करती हैं। और वह बच्चे उन वृक्षों का अमृत-तुल्य दूध पीते हैं वे बच्चे एक साथ बढ़ते और रूपमें स्वभाव में एक से ही होते हैं। वे निरोग होकर आपस में प्रेम पूर्वक रहते हैं। वे अत्यन्त बलवान मनुष्य तेरह हजार दस सौ पांच वर्ष तक जीते हैं। इसके बाद हम जो शैलराज जारुधि के उत्तर में जो उत्तर कुरु है उसका वर्णन करेंगे। यह उत्तर कुरु पर्वत सभी स्थानोंमें प्रसिद्ध है वहां दो बहुत ऊँचे ऊँचे कुल पर्वत हैं, जहां पर बहुतसी गुफायें, झरने और कन्दरायें हैं। वहां बहुत से वन शोभायमान हैं। वहां तरह तरहकी धातु, फल, फूल और सिद्ध मनुष्य

रहते हैं। उन पर्वतों के चारों तरफ बहुत से दूसरे पर्वत घिरे हुये हैं इन दोनों पर्वतों का नाम चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त है। इन पर्वतों के बीच में होकर भद्रसीमा नदी बहती है। वहां पर बहुत सी नदियां हैं। उन नदियों के जल कुरु के सभी रहने वाले मनुष्य पीते हैं। इनमें बहुत सी नदियां ऐसी भी हैं जिनमें दूध, मधु, मदिरा और घी बहता है। वहां पर ऐसे तालाब भी हैं जिनमें दही भरा रहता है। अमृत की तरह स्वादिष्ट मीठे फलों के ढेर लगे होते हैं। यहां के वृक्ष फूल और लताओं से शोभित रहते है। वहां भौंरे गुञ्जारते रहते हैं। हे ब्राह्मणो! वहां के हजारों सरोवरों के किनारे वनों में असंख्य पद्म और उत्पल के वन हैं। वहां सभी ऋतुओं के खाने पीने रहने सोने माला लेपन करने की सामग्री मिलती रहती है। तरह तरह के सुन्दर मुख वाले पक्षी किलोल करते रहते हैं। वहां पर बहुत बड़े बड़े विशाल भवन बने हुये हैं। जिनकी खिड़कियां सोने और मणियों से चित्रित हैं। वहां पर बाजे नगाड़े बजते रहते हैं वहां सभी नर नारी सुखपूर्वक निवास करते हैं। वहां की हवा में फूलों की सी सुगन्धि आती रहती है। जिसके छूने से शरीर सुख पैदा होता है इस कारण वह द्वीप उत्तम गुणों के कारण पृथ्वीका स्वर्ग कहलाती है। पूर्वतटमें चन्द्रकान्त पर्वत के पास रहने वाले नर काले रंग के होते हैं सूर्यकान्त पर्वत के पास रहने वाले श्याम अवदात रंग के होतें हैं और वहां के सुखी निवासी हमेशा सुखी रहते हैं। वहां के मनुष्य देवताओं के तरह बलशाली तेजवान अपनी इच्छानुसार विहार करने वाले होते हैं। वहांके मनुष्य मुकुट रंग विरंगे कपड़े पहने तथा हार कुण्डल, माला, केयूर इत्यादि पहने हुये सदा युवक बनकर हजारों वर्षों तक जाते रहते हैं। प्रजा बहुत सुखी रहती है वहांकी प्रजा का कभी वंशभी समाप्त नहीं होता क्योंकि वहाँ के वृक्षों से भी नर- नारियों के जोड़े पैदा होते हैं। वहां पर किसी प्रकार के दुख शोक और बीमारी नहीं होती हैं सभी मनुष्य एक समान होते हैं। उत्तर कुरु के दक्षिण भागमें चन्द्रद्वीप है इसका विस्तार पांचहजार योजनका है यहां चन्द्रमा का मण्डल स्थिति है।

वहां समुद्र की तरह लहरें सदा लहराती रहती हैं। इसकी लम्बाई चौड़ाई सौ सौ योजन की है। यहां पर सभी प्रकार के सुख उपलब्ध हैं। उसके बीच एक पर्वत स्थित है, जिसका नाम कुमुदप्रभ है। वहां पर सिद्ध चारण इत्यादि रहते हैं। वह पर्वत चन्द्रमा की कान्ति के समान कमनीय, सुन्दर, श्वेत मूंगे मणियों से चित्रित है। वहां पर बहुत सी निर्झर कन्दरायें, बाग बगीचे, तथा विशाल पर्वत और कुंजों से शोभा बढ़ती रहती है। उस पर्वत से चन्द्रवती नाम की एक श्रेष्ठ नदी बहती है। इसका जल चन्द्रमा की किरण की तरह निर्मल और पवित्र है। वहां चन्द्रमा के नाम का एक पर्वत है जो बहुत प्रसिद्ध है। वहां की प्रजा चन्द्रमा की तरह कान्तिमान पूरे चन्द्र की तरह मुख वाले, धार्मिक, सौम्य सत्य बोलने वाले सदाचारी होकर हजारों वर्षों तक जीते रहते हैं। यह तरह तरह के फूलों फलों, धनधान्यों से भरा देश है। यहां पर राजा राज्य करते हैं। वहां वायु देव का रत्नों से जड़ित एक सिंहासन है जहां पर वायुदेव शरीर धारण करके सदा पर्वों में पूजे जाते हैं। वहां के मनुष्य सोने के समान रंग के होते हैं तथा सोने के ही जेवर पहनते हैं। वे वीर्यशाली, बलवान आनन्दित होकर हजारों वर्षों तक जीते हैं वह तरह तरह के रंग विरंगे कपड़े तथा माला पहनते हैं।

सूतजी बोले–हे ऋषियो! जैसा आपने कहा वैसा ही वर्णन हमने आपको सुना दिया है अब आप बतायें, कि आपको मैं कौनसी कथा का वर्णन सुनाऊँ? सूतजी के इस प्रकार पूछने पर ऋषियों ने फिर कोई कथा सुनने की इच्छा की है और कहा।

ऋषियों ने कहा–हे सूतजी! यह भारतवर्ष है जहां प्रजासृष्टि की व्यापार क्रम में स्वाम्भुवादि चौदह मनु पैदा हुये हैं अब आप हमको इसके विषय में बताइये। उन ऋषियों की बात सुनकर विद्वान पण्डित श्रीमान सूतजी एकचित्त होकर विस्तार पूर्वक ऋषियों से कहने लगे।

सूतजी बोले–हे ब्राह्मणो! हमने आपको कुरुवर्ष की स्थिति का वर्णन सुना दिया है। और अब हम भारतवर्ष के विषय

में सुनायेंगे पूरब से पश्चिम की तरफ हिमालय पर्वत के दक्षिण में यह पुण्यतीर्थ भारतवर्ष है। समुद्र के उत्तर में और हिमालय के दक्षिण में जो देश स्थित है वह भारतवर्ष नाम से प्रसिद्ध है। यहां कीप्रजा भारतीकहलाती है यहां की प्रजाओंका निर्वाह करने के कारण ये मनु भरत कहलाते हैं। भरत नाम के कारण इस देश का नाम भारत वर्ष पड़ा। यहीं से स्वर्ग,मोक्ष, मध्य, अन्त गति प्राप्त होती है मृत्युलोक के निवासियों के लिये यही एक स्थान श्रेष्ठ है इस भारत वर्ष के नौ भेद हैं ये नौद्वीप समुद्र से घिरे हुये हैं। इन्द्रद्वीप, कसेरु, ताम्रवर्णी, गभस्तिमान, नागद्वीप,सोम्य,गन्धर्व और वारुण से अलग नवाँ यह भारतवर्ष सागर से घिरा है। यह द्वीप दक्षिण से उत्तर तक हजार योजन का है। यह कुमारी से लेकर हिमालय तक त्रिर्यग भाव से उत्तर की तरफ तक नौ हजार योजन का विस्तार है। भारतवर्ष के अन्त में मलेच्छों की बस्ती है पूर्वी में किरात लोग रहते हैं। पश्चिम में यवन जाति के मनुष्य रहते हैं इसके मध्य में अलग अलग ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र जाति के मनुष्य रहते हैं इन चारों वर्णों के मनुष्य यज्ञ व्यापार, युद्ध द्वारा अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। इन चारों वर्णों के मनुष्य अपने अपने कर्मों में आपस में, व्यवहार धर्म और काम के अनरूप होता है। इसी भारतवर्ष में स्वर्ग और अपवर्ग के लिये पांच आश्रम भी बने हैं। यह नवां टेढ़ा और लम्बा द्वीप है वही यहां का प्रमुख सम्राट कहलाता है वह इस लोक में सम्राट व आकाश में विराट तथा अन्य लोक में स्वराट् कहलाता है। यहां के सात कुल पर्वत हैं जिनके नाम ये हैं सुन्दर पर्व वाले महेन्द्र पर्वत, मलय पर्वत, सत्य पर्वत शुक्ति मान, ऋक्ष, विन्ध्य पर्वत और पारियात्र इत्यादि सात कुल पर्वत हैं इसके चारों तरफ भी बहुत से पर्वत घिरे हुये हैं। इन पर्वतों के बीच बहुत से देश बसे हुये हैं उन देशों में आर्य जाति के मनुष्य और मलेच्छ वंश के मनुष्य रहते हैं। वहां के रहने वाले मनुष्य गंगा सिन्धु, सरस्वती, शतद्रु चन्दभागा, यमुना, सरयु, इरावती, विपाशा, गोमती, कौशिकी, तृतीया, गंडकी,इक्षु, लोहित इत्यादि इन नदियों

का पानी पीते हैं। ये सब नदियां हिमालय पर्वत से निकली हैं वेद स्मृति, वेदवती, वृत्रघ्नी, सिन्धु, वर्णाशा, चन्दना सतीय, महतीपरा, वेत्रपती, शिप्रा, अवन्ती, इत्यादि नदियां पहाड़ों से निकलती हैं। महानद शोशा, नर्वदा,सुमदादुमा, मन्दाकिनी,दक्षार्णा, चित्रकूटा,तमसा, पिप्पला, श्रोणी, करतोय इत्यादि बहुत सी नदियां ऋक्ष पर्वत से निकलती हैं। इनका जल मणि की तरह निर्मल और स्वच्छ है। तापी, पयोष्णी, भद्रा, कावेरी, तुंगभद्रा, सुप्रयोगा, गोदावरी, भीमरथी कृष्णा, वेणी इत्यादि ये नदियां दक्षिण देश से किकली हैं। कृतमाला, ताम्रपर्णी, पुण्यजाति और उत्पावली इत्यादि नदियां मलयाचल पर्वत से निकली हैं। इन नदियों का जल निर्मल और स्वच्छ है।

महेन्द्र पर्वत से यह नदियां निकली हैं। त्रिसामा, ऋतुकुल्या इक्षुला, त्रिदिवा, लांगुलिनी और वंशधरा इत्यादि हैं। ऋषीका, सुकुमारी, मन्दगा, मन्द वाहिन, कृपा, पलाशिनी, शुक्तिमान पर्वत से निकली हैं। गंगा सरस्वती इत्यादि सभी नदियां समुद्र में जाकर गिरती हैं। ये सभी पवित्र नदियां संसार के पापों को नष्ट करने वाली हैं। इन नदियों से हजारों छोटी २ नदियाँ निकली हैं इनमें कुछ कुरुपाचल शाल्व, जांगल, शूरसेन, भद्रकार, वोधसतपपेश्वर तैलंग और मगध में बहती हैं। मध्यम प्रदेश के ये ही देश कहलाते हैं। सत्य पर्वत के उत्तर में गोदावरी नदी बहती है देवराज इन्द्र ने यहां गोर्वधन नामका स्वर्गपुर बनाया था और भरद्वाज मुनि ने रामचन्द्रजी की प्रिय कामना से वहां वृक्ष और औषधियों को लगाया। उत्तर की तरफ ये देश हैं वाह्लीक, वारधान, आभीर, कालतोयक, अपरीत, शूद्र, गन्धार, यवन, सिन्धु, सौवीर, भद्रक, शक, रुद, कुलिन्द, परित इत्यादि बहुत देश हैं इन देशों में क्षत्रिय जाति के लोग रहते हैं। जिन देशों में वैश्य शूद्र रहते हैं वह ये देश हैं। काम्वोज, दरद वर्वर प्रियलौकिक, पीन तुषार, आत्रेय, भरद्वाज, प्रस्थल, कसेरुक, लम्पाक, स्तनय इत्यादि अन्य देश भी अब हम पूरव दिशा की ओर जो देश हैं उनके नाम बतायेंगे। आन्ध्रवाक, अन्तगिरि, प्रवंग, वंग मालय, मानवर्ती, मगध गोविन्द

इत्यादि अन्य देश भी हैं। इनके बाद दक्षिण दिशा के देशों के नाम और उनके रहने वाले मनुष्यों के बारे में बतायेंगे। पाण्डय, केरल, चौल्य, कुल्य, सेतुक, कुमन, कुन्तल, अन्ध्र, उद्रिद, नलकाकिक, आरव्य, वर, पुलिन्द इत्यादि बहुत से देश हैं। इनके अलावा और जो दूसरे देश हैं उनके भी नाम बतऊँगा। सुर्पाकार, कोलवन, दुर्ग, पुलेय, सुराल, सपस, तापस, तुरसित, परक्षर और नासिक्य इत्यादि नर्वदा नदी के किनारे के दूसरे देश ये हैं। भानुकच्छ, समाहेय, सहस, शाश्वत, कच्छीय सुराष्ट्र, आनर्त और संगरीत इत्यादि ये सब देश विंध्याचल पर्वत के निचले भाग में स्थित हैं और इनमें अब कुछ पहाड़ी देश भी हैं। निगर्हर, हंसमगि चुरण, खस, कुशावरण, हूण, मालव, किरात और तामस हैं। भारतवर्ष में चार युग बताये हैं जो सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग इत्यादि हैं। इसके आगे का वर्णन हम पीछे करेंगे।

इति भुवन-विन्यास नामक पैंतालीसवां अध्याय समाप्त ॥ ४५ ॥

छियालीसवां अध्याय

(भुवन-विन्यास)

सूतजी बोले—ऋषियों ने इस तरह सूतजी से आनन्द युक्त वाणी सुनकर और कुछ सुनने की इच्छा की, और सूतजी से पूछा।

ऋषियों ने कहा—जिस तरह आपने भारतवर्ष के बारे में हमें कुछ कथा सुनाई, उसी तरह किं पुरुष वर्ष और हरि वर्ष के बारे में भी हमें कुछ बताइये। ऋषियों के इस तरह पूछने पर सूतजी ने कहा —

सूतजी बोले—हे ब्राह्मणों! आप लोग अब जो सुनना चाहते हो उसको आनन्द से सुनें किंपुरुषवर्ष में एक बहुत विशाल वृक्षखण्ड है जो नन्दन वन के समान विशाल है। वहां पर लोगों की आयु दश सहस्र वर्ष की है। पुरुषों का वर्ण स्वर्ग के समान औरतें अप्सरा की भांति सुन्दर होती हैं। तप्त स्वर्ण की सी कान्ति वाले वे पुरुष रोज शोक से रहित और शुद्ध हृदय वाले होते हैं। वहां के निवासी प्लक्ष के वृक्ष से बहने वाले उत्तम रस को निरन्तर पीते रहते हैं।

इसके बाद हरिवर्ष का वर्णन सुनिये। वहां के लोग चांदी के वर्ण वाले हैं। वहां पर सभी लोग देवलोक से परिभ्रष्ट होते हैं अतः वे सब देव स्वरूप ही हैं। वे लोग ईख का रस पीते हैं।। यहां ग्यारह हजार वर्ष तक आन्नद पूर्वक जीवित रहते हैं। वहां के लोगों को बुढ़ापा नहीं होता और न बड़े होते हैं। हमने मध्यम इलावृत वर्ष बताया है वहां भी कोई बूढ़ा नहीं होता और न वहां कभी सूर्य की किरणें मन्द होती हैं। इलावृत में चन्द्र सूर्य और नक्षत्रों का प्रकाश नहीं होता है वहां के लोग पद्म की कान्ति वाले, पद्म के से वर्ण वाले और पद्म की सी सुगन्ध वाले होते हैं। ये लोग देवलोक से परिभ्रष्ट, अजर अमर हैं। जो सदा जामुन का फल और रस का पान करते हैं। ये सदा प्रसन्न रहते हैं। ये लोग स्वयं ही अपने नियम बनाने वाले होते हैं और सुन्दर कर्म फलों को भोगने वाले होते हैं ये तेरह हजार वर्ष तक वहां पर जीवित रहते हैं। इलावृत वर्ष मेरु की ओर नौहजार योजन विस्तार वाला है इसका कुल विस्तार २६ हजार योजन के परिमाण वाला है यह चारों ओर से चौकोर है।

मेरु के पश्चिम में नौ हजार योजन दूर गन्धमादन पर्वत है जो चौंतीसहजार योजन का है यह उत्तर और दक्षिण में नील पर्वत तथा निषध पर्वत तक फैला है। वह पृथ्वी तल से चालीस हजार योजन ऊँचा है तथा एक हजार योजन पृथ्वी में धँसा हुआ है। माल्यवान पर्वत इसके पूर्व में है जिसका परिमाण मैं पूर्व में बता चुका हूँ।

ऊपर कहे इन पर्वतों के मध्य में महामेरु स्थित है। जो नील के दक्षिण में और विषद के उत्तर में है। वह ऐसा प्रतीत होता है कि मानों सब पर्वत उसके अन्दर डूबे हुये हैं। उसका परिमाण एक नियुत योजन का है पृथ्वी मडल पर स्थित सुमेरु उससे कुछ छोटा है। मेरु के दक्षिण और निषध के उत्तर में अंजन की तरह जम्बू रसवती नदी है। वहां सुदर्शन नामका एक पुराना जामुन का पेड़ है सिद्ध लोग उसकी सदा सेवा किया करते हैं। वह महावृक्ष नौ हजार योजन का है। उसकी चोटी स्वर्ग को स्पर्श करती है तत्ववेत्ता ऋषियों के मतानुसार

इसके फलों का विस्तार आठ सौ आठ अरत्नि है इन फलों का रस नदी बनकर बहने लगता है। वह नदी मेरु की परिक्रमा करती हुई उस वृक्ष की जड़ में ही प्रवेश कर जाती है। यहां के निवासी जामुन खाते तथा जामुन का रस पीते हैं। जिससे वे कभी बूढ़े नहीं होते हैं। यहां जाम्बूनद नामक सुवर्ण भी मिलता है जो देवताओं के भूषण बनाने के काम में आता है रक्ष, पिशाच और यक्ष गण हिमालय पर, गन्धर्व एवं अप्सरायें हेमकूट पर तथा शेष, वासुकिरक्षक आदि नाग निषध पर्वत पर निवास करते हैं। तेतीस याज्ञिक देवगण महामेरु पर घूमते रहते हैं। वेदूर्यमय नील पर्वत पर विशुद्ध ब्रह्मर्षि और सिद्ध गण निवास करते हैं। दैत्य और दानव श्वेत पर्वत पर रहते हैं। श्रृंगवान पर्वत पितरों का भ्रमण स्थान है। विभागक्रम से अवस्थित इन नौ देशों में भूतगण नित्य ही निवास करते हैं। जिनकी गिनती बहुत खोज करने पर भी नहीं की जा सकती है।

इति श्री वायुमहापुराण का छियालीसवां भुवनविन्यास नामका अध्याय समाप्त ॥

* सैंतालीसवाँ अध्याय *

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले-हिमालय पर्वतके बांये भाग में कैलाश पवत है। उस स्थान पर धनाधिपति कुवेर देव राक्षसों के साथ रहते हैं कुवेर देवता वहां अप्सराओं के साथ आमोद प्रमोद किया करते हैं। केलाश पर्वत का पाद देश निर्मल जल के समान पवित्र है शीतल मन्द नामक जल निकलता है और उसी से मन्दाकिनी नाम की पवित्र नदी निकलती है उसी के किनारे नन्दन नामका एक पवित्र विशाल वन है। कैलाश पर्वत के उत्तर और पूर्व की तरफ तरह तरह की औषधियों से युक्त तथा तरह २ की धातुओं से चित्रित पवित्र सुवर्ण पर्वत के पास शुद्ध रत्न के समान चन्द्रप्रभा नामका एक पर्वत है उसी के नीचे के हिस्से में अच्छोद नामका एक सरोवर है इसी अच्छोद सरोवर से आच्छोदा नाम की नदी निकली है। इस आच्छोदा नदी के किनारे पर एक चैत्र रथ

नामका एक महान वन है। चन्द्रप्रभ पर्वत राक्षसों के सेनापति मणिभद्र अपने सेवकों के साथ रहते हैं उस स्थान पर दुष्ट स्वभाव के गुह्यक भी उ के परिवार की तरह मेल से रहते हैं। महानदी मन्दाकिनी और आच्छोदा नदी पृथ्वी के बीच में बहती हुई समुद्र में गिरती है। कैलाश पर्वत के दक्षिण पश्चिम की तरफ पिशाङ्ग नामक पर्वत है वह बहुत से शिवजी के भक्त तथा और जीवधारी नाना तरह की औषधियों मनः शिला मण्डित से युक्त है और उसी के पास स्वर्णश्रृंग से युक्त रक्त वर्ण का सूर्यप्रभ नामका एक विशाल पर्वत है। उसी के नीचे के हिस्से में लोहित नामका एक बहुत बड़ा सरोवर है। इसी सरोवर से लोहित नामका एक पवित्र महानदी निकला है उसी के किनारे पर एक विशोक नामका महावन है। वह महावन देवताओं का लीलावन कहलाता है। उसी पर्वत पर मणिवर नामक एक यक्ष रहता है। वह यक्ष गुह्यकों के परिवार के साथ मित्रता से शान्ति सद्भाव रखता है। कैलाश पर्वत के दक्षिण भाग में वैद्युत नामका एक विशाल पर्वत है वहां पर दुष्ट स्वभाव के जीव रहते हैं तथा तीन शिखर वाले वृतासुर देह से प्रकट अंजनाचल के पास हैं। इसके मूल देश में पवित्र मानस नामका एक सरोवर है। इसी सरोवर से पवित्र सरयू नदी निकली है। इस सरयू नदी के किनारे वैभ्राज नामका एक महान वन है उस वन में एक महा बलवान ब्रह्मपात नामका राक्षस रहता है वह राक्षस कुबेर देवता का सेवक तथा प्रहेता का पुत्र है। कैलाश पर्वत के पश्चिम भाग में अरुण नामका एक महान पर्वत है। वहां बहुत से जीव रहते हैं तथा तरह २ की औषधियां वहां पैदा होती हैं। इसके पास सुवर्ण के समान विशुभ्र शिलाओं से ढका शिव प्रिय श्रीमान पर्वत स्थिति हैं इस पर्वत पर निवेश धूम्र लोहित रहते हैं। इस पर्वत के मूल देश में शैलोद नामक एक सरोवर है और उसी सरोवर से शैलोदा नामकी एक महानदी निकली है यह चक्षु नदी और सीता से मिलती हुई लवण सागर में गिरती है। इस नदी के किनारे पर सुरभ नामका एक महान वन है। कैलास पर्वतके उत्तरी भाग में सुवर्णबालुकामय विन्दु नामका सरोवर है।

उस सरोवर पर राजा भागीरथ पहुंचे थे। और सरोवर के किनारे बैठ कर उन्होंने गंगा लाने के हेतु बहुत दिन तक वहां तपस्या की। पवित्र गंगादेवी वहां पर पहले से ही विद्यमान थी वह गंगादेवी सोमपाद से उत्पन्न होकर अलग अलग सात भागों में बँट गई है। वहां पर यज्ञ यूप और वितियां सोने और मणियों से चित्रित हैं। आकाश में जो तारागणों के बीच तेज चमकने वाला जो तारा है वही तारा त्रिपथगा आकाश और स्वर्ग को ढकती हुई भगवान शंकरजी के सिर पर उतरी और श्रीशंकरजी ने अपनी योगमाया से उसको वहीं रोक दिया। यह देखकर गंगादेवी क्रोधित होकर बोली तो उनके क्रोध से कुछ बूँदें पृथ्वी पर गिर पड़ीं इसीसे विन्दुसर बनगया। तब भगवती गंगा ने मन में कहा कि मैं अपने प्रवाह वेग में शंकरजी को बहाती हुई पाताल में चली जाऊँगी। भगवती गंगादेवी के मन में उन्हें ऐसा सोचते भगवान शंकर समझ गये और क्रोध में तमनमायी गंगा को पृथ्वी पर गिरते देख उन्होंने वहीं अपने सिर पर रोक रखी, और तब भगवान शंकर ने भगवती गंगा के घमंड को देखकर उन्होंने उनको अपने सिर पर छिपा लेना चाहा। इसी समय भगवान शंकर से राजा भागीरथ को अपने सामने खड़े देखा जो तप करने के कारण जो अत्यन्त दुर्बल और क्षीण होरहे थे। राजा भागीरथ ने भगवान शंकर को गंगा के लिये प्रसन्न पहले ही कर लिया, अतः उनके वरदान को सोचते हुए उन्होंने क्रोध शान्त कर लिया, और फिर ब्रह्माजी ने आकर भगवान शंकर को उनकी प्रतिज्ञा की याद दिलायी। इसके बाद भगवान शंकर ने अपने तेज से गंगा को नदी में छोड़ दिया। इसके बाद वहींसे गंगा नदी सात धाराओंमें बहनेलगी। इनकी तीन धारायें पूरबकीतरफ बहने लगीं इन तीनों गंगाके येनाम हैं-नीलनी,ह्लादिनी,पावनी इत्यादि। और तीन धारा चक्षु,सीता,सिन्धु नाम की धारा पश्चिम की तरफ बहने लगी, तब सातवीं धारा राजा भागीरथ के पीछे पीछे दक्षिणकी तरफ बहनेलगी इसी कारणउसधाराकानाम भागीरथी पड़ाहै। वह भागीरथीलवणसागर में जाकर गिरती है। सिन्धु और अरु को दो भागोंमें अलग करके यह सीता नदी पश्चिम समुद्रमें गिरती है चक्षु नदी समुद्रमें जाकर गिरती है।

आगे चलकर यह पवित्र नदी पूर्व की तरफ बहती है। कितनेही देशों और पर्वतों को ढकती हुई यह नदी समुद्र में पूरब की तरफ अदृश्य हो जाती है। और पार्वती धारा भी पूरब की तरफ बहती है और भी अनेक पूर्वी देशों को ढकती हुई नेमि मण्डल कोष्ठ के पास महासागर में गिरती है। इन नदियों की बहुत सी छोटी छोटी नदियां हैं। हीरश्रृङ्ग पर्वत के ऊपर विद्वान वशी कौवेरक रहते हैं। वहां पर कुबेरदेव के चार सेवक रहते हैं।

हेमकूट पर्वत के पीछे सायन नामका एक सरोवर है। इस सरोवर से पवित्र ज्योतिष्मती नदी निकली है। वे दोनों ही तरफ पूर्व पश्चिम समुद्र में गिरती है। निषध पर्वत पर विष्णुपद नामका एक सरोवर है। इस सरोवर से गान्धारी और नत्वली नामकी पवित्र नदियां निकलती हैं। मेरु पर्वत के पीछे चन्द्रप्रभ नाम का एक विशाल सरोवर है, वहां पर जाम्बू नाम की नदी बहती है। नीलाचल पर्वत पर शुभ पुण्डरीक युक्त पयोद नाम का सरोवर है। इसी सरोवर से पुण्डरीका और पयोदा नाम की नदियां निकली हैं।

श्वेत पर्वत से उत्तर मानस नाम का पवित्र सरोवर है इस सरोवर से ज्योत्सना और मृगकान्ता नाम की नदियां निकली हैं। वहां रुद्रकान्त नाम का एक दूसरा सरोवर भी है। वह सरोवर सब सुख से सम्पन्न है। वहां पर बहुत से सरोवर हैं। ये सरोवर जय नाम से प्रसिद्ध हैं। उनसे शान्ति और माधवी नाम की दो नदियां निकली हैं। किं पुरुष देशों में वर्षा नहीं होती है वहां की नदियों से पवित्र निर्मल जल बहता रहता है। ये पवित्र नदियां लम्बे आकार में होकर लवण सागर में गिरती हैं। ऋषभ, दुन्दुभि, महागिरि धूम्र चन्द्रकंक, तथा प्रणादि पर्वतों के उत्तर में बहती हुई ये नदियां उत्तरी सीमा तक जाकर महा समुद्र में गिरती हैं सोमक, वाराह और नारद नाम की नदियां लवण सागर में गिरती हैं। बक, बलाहक और मैनाक पर्वत के बीच सवर्तक नामकी एक अग्नि है जो समुद्र के जल को पीती रहती है। बारह पर्वत इन्द्र के डर के कारण लवणो दधि में

घुस जाते हैं। श्वेत चन्द्र में जो काला शशांक है वही भारतवर्ष का चिन्ह है इन देशों के रहने वाले प्राणी आरोग्य, आयु, धर्म, अर्थ, और काम इत्यादि गुणों से पूर्व देशों के रहने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक वैभवशाली हैं। तरह तरह की जाति वर्ण के मनुष्य इन देशों में निवास करते हैं। इसी तरह यह पृथ्वी पूरे संसार को लोक रिथति के लिये अपने ऊपर धारण करती है।

श्रीवायुमहापुराण का 'भुवन विन्यास'नामक सैंतालीसवां अध्याय समाप्त

अड़तालीसवां अध्याय

(भुवन विन्यास)

सूतजी बोले–भारतवर्ष के दक्षिण में एक महासागर है, जिसका योजन दस हजार का है। तीन हजार योजन के विस्तार में तीन भागों में बंटा हुआ एक द्वीप है वह तरह तरह के फल फूलों से प्रसिद्ध है। वह विद्युदान नाम का एक महाशैल कुरु पर्वत है। वह द्वीप उस पर्वत के अनेक शिखरों सेशोभायमान है वहां बहुत सी नदियां हैं उन नदियों का मीठा और निर्मल जल है। उस पर्वत के अनेक दर्रों में स्त्री पुरुष प्रेम पूर्वक हंसी खुशी जीवन व्यतीत करते हैं। उस पर्वत के नीचे के हिस्से में बहुत से पुर बसे हुये हैं। यहाँ के रहने वाले मनुष्य नील-वर्ण के होते हैं वह बहुत बड़ी बड़ी दाढ़ी मूंछें रखते हैं। वे सभी मनुष्य अस्सी वर्ष तक की आयु के होते हैं। मनुष्य बन्दरों की तरह फल मूल खाकर जीवन निर्वाह करते हैं। वे मनुष्य अशुद्ध होकर आचार विचार का ध्यान नहीं रखते हैं। इस द्वीप में इसी प्रकार के असभ्य मनुष्य सदा रहते हैं। इसके बाद जो दूसरे द्वीप हैं वह तीस, पचास, बीस, साठ सौ और हजार हजार योजन के विस्तार में फैले हुये हैं। वहां पर तरह तरह की जाति के मनुष्य रहते हैं। जम्बू द्वीप में तरह तरह की वस्तुओं को पैदा करने वाले और भी छः द्वीप हैं। पृथ्वी में वह द्वीप तरह तरह के रत्नों को पैदा करते हैं। पृथ्वी में सोने और मूंगे की बहुत सी खानें हैं। वह नदी, शैल, पर्वत और वनों से शोभित लवणसागर की तरह हैं। इसकी गुफाओं में कई

तरह के जीव रहते हैं। नाग देश के बीच में वह महागिरि अनेक देशों में फैला हुआ है वहां बहुत से पर्वत हैं जो समुद्र तक फैले हुये हैं यक्ष नाम के द्वीप में भी बहुत सी रत्नों की खानें हैं वहां धातुओं से भरा हुआ द्युतिमाग नामका पर्वत है। इसी पर्वत से बहुत सी नदियां निकली हैं और इससे स्वर्ण भी पैदा होता है।

मलयद्वीप भी इसी द्वीप के समान है मलय द्वीप में भी मणि, सोने और रत्न की खानें हैं यहां पर चन्दन के वृक्ष होते हैं। इस द्वीप में मलेच्छ जाति के मनुष्य रहते हैं वहां पर मलय नामका एक विशाल वैभव शाली पर्वत है। इस पर्वत पर चांदी की खानें हैं। महामलय नामका भी एक पर्वत है दूसरा मन्दर नामका पर्वत है वह पर्वत बहुत से फल फूलों से समृद्ध है वहां पर देवर्षि रहते हैं। वहां पर अगस्त्य ऋषि का भवन है देवता और असुर उन ऋषि की वन्दना किया करते हैं। मलय पर्वत की तरह वहाँ पर एक कांचन पाद नामका पर्वत है उस पर्वत पर बहुत से ऋषियों के आश्रम बने हुए हैं। वह आश्रम तृण निकुंज और सोमलता से बने हुए हैं।

इसके बाद वहां पर त्रिकूट नामका पर्वत है। वह पर्वत नाना तरह की औषधियों से भरा है त्रिकूट पर्वत पर घरों के समान गुफायें बनी हुई हैं। त्रिकूट पर्वत का शिखर तोरण और सुवर्णमय परकोटे से चित्रित है। इस त्रिकूट पर्वत पर सौ योजन लम्बी और तीस योजन चौड़ी लंका नामकी एक नगरी है यह नगरी सभी प्रकार से वैभवशाली है। वहा के मनुष्य हर समय खुशी दिखाई देते हैं इस लंका में देवताओं के शत्रु अपनी इच्छानुरूप भेष बदलने वाले राक्षस लोग रहते हैं। इस महानगरी में मनुष्य किसी भी तरह नहीं जा सकते हैं इस द्वीप के पूर्वी दीप समुद्र के किनारे गोकर्ण महादेवजी का मन्दिर है।

इसके बाद शँख द्वीप में एक विशाल राज्य है, जिसका विस्तार सौ योजन में है वहां पर शंख की तरह स्वच्छ निर्मल एक शंखगिरि नामका पर्वत है। उस पर्वत पर तरह २ की रत्नों की खानें हैं। वहां पर भाग्यशाली मनुष्य रहते हैं उसी पर्वत से शंखनागा नाम की एक

नदी निकली है। यहां पर नाग राज शंखमुख निवास करते हैं कुमुद द्वीप में तरह तरह के फूल खिले रहते हैं। वहां महादेवजी की महा भागा कुमुदा नामकी भगिनी है वह सब जगह पूजित है वाराह द्वीप में कितनी ही जाति के मलेच्छ लोग अपने अपने घर बना कर रहते हैं। वह द्वीप धन धान्यों और धार्मिक प्रवृति के मनुष्यों से भरा है। वहां पर्वत, नदी, फल फूलों से सजा सुन्दर शिला वाला वाराह पर्वत है जिसमें बहुत सी गुफायें और दरी, झरने इत्यादि हैं। उससे पवित्र निर्मल जल वाली वाराही नामकी नदी निकली है। वहां की प्रजा वाराह रूप धारण करने वाले विष्णु भगवान की पूजा करते हैं। मैंने इस तरह चारों दिशाओं में स्थित छः अनुद्वीपों का वर्णन आपको सुनाया है भारतद्वीप दक्षिण दिशा में अति विस्तार से फैला है। एक ही भारतवर्ष में बहुत से द्वीप हैं वह द्वीप समुद्र से अलग होकर कितने ही भागों में बँट गये हैं और इसी तरह अन्तरद्वीप से मिले चार महाद्वीप हैं। जम्बू द्वीप का वर्णन मैंने आपको पहिले बता-दिया है।

इति श्री वायु महापुराण का 'भुवन-विन्यास' नामका अड़तालीसवां अध्याय समाप्त ॥ ४८ ॥

उन्नचासवां अध्याय

(भुवन-विन्यास)

सूतजी बोले हे ब्राह्मणो, अब मैं प्लक्ष द्वीप का वर्णन करूँगा प्लक्ष द्वीप जम्बू द्वीप से दुगना है। इसकी सीमा भी उससे तिगुनी है। लवण सागर को यह द्वीप चारों ओर से घेरे हुये है यहां के निवासी परम पवित्र और दीर्घायु वाले हैं यहां न तो कभी अकाल पड़ता है। और न कोई बूढ़ा या रोगी होता है। वहां मणियों से युक्त शुभ सात पर्वत हैं और रत्नों को उत्पन्न करने वाली नदियां हैं। इन सात पर्वतों के नाम इस प्रकार हैं। प्रथम गोमेदक पवत है जिसके नाम पर गोमेदक देश बसा हुआ है। दूसरे पर्वत का नाम चन्द्र है।

यहां सब औषधियां मिलती हैं। अश्विनी कुमारों ने यहां ये औषधियां अमृत के लिए स्थापित की हैं तीसरे पर्वत को नारद कहा जाता है। अधिक ऊँचा होने से इसको 'दुर्ग शैल' भी कहा जाता है। पूर्व समय की बात है कि इसी पर्वत पर नारद मुनि और पर्वत ऋषि उत्पन्न हुये थे। चौथे पर्वत को दुन्दभि कहा गया है। इस पर्वत पर प्राचीन समय में देवताओं ने एक नगाड़ा (दुन्दुभि)बजाई थी जिसके शब्द से जीव मरने लगते थे। रज्जुदार और शाल्मल असुर यहां पर ही मारे गये थे। पांचवे पर्वत को सोमक नाम से कहा गया है। जिस पर प्राचीन काल में देवों ने अमृत रखा था जिसे गरुड़ ने हरण करके अपनी माता को दिया था। छटे पर्वत को सुमना या ऋषभ कहते हैं यहां बाराह भगवान ने हिरण्याक्ष को मारा था। सातवें पर्वत का नाम वैभ्राज है, अपनी प्रभा से यह भासित होने के कारण वैभ्राज कहा गया है। गोमेदक का गोमेदक देश, चन्द्र का शिखिर, नारद का सुरवोदय, दुन्दुभि का आनन्द, सोम का शिव, ऋषभ का सोमक और वैभ्राज पर्वत का ध्रुव प्रदेश कहा गया है इन देशों में देव, गन्धर्व, सिद्ध चारण लोग विहार करते हुये रहते हैं। इन देशों में सात समुद्र गामिनी नदियां हैं जो सप्त गंगा कहलाती हैं। इनके नाम हैं–अनुतप्ता, सुतप्ता, निष्पापा, मुदिता, ऋतु, अमृत, और सुकृता है। फिर इनसे हजारों नदियां निकली हैं देवराज यहां अधिक वृष्टि किया करते हैं। यहाँ की प्रजा वर्णाश्रम धर्म से युक्त निरोग और बलिष्ठ होती है। प्लक्ष आदि पांच द्वीपों में प्रजा का त्रेतायुग के समान काल बीतता है। यहां भी मध्य में एक प्लक्ष का महा वृक्ष है जिसके कारण हम को प्लक्ष द्वीप कहा गया है। स्थाणु यहां के पूज्य देवता हैं यह प्लक्ष द्वीप ईख के रस से भरा हुआ है अब शाल्मल द्वी का वर्णन करूँगा। सो ध्यान पूर्वक सुनिये।

सब द्वीपों में शाल्मल द्वीप अति उत्तम है। यह शाल्मल द्वीप ईख रस के सागर को चारों ओर से घेरे हुए हैं। यह प्लक्ष द्वीप से दुगना है यहां पर भी रत्नों को उत्पन्न करने वाले सात पर्वत हैं। उन पर्वतों

से सात नदियां निकती हैं तेजोमय सूर्य की तरह पहला पर्वत 'कुमुद' है। दूसरा पर्वत 'उन्नत' कहागया है। जहां गगनचुम्ब हरिताल के वृक्ष हैं तीसरे पर्वत का नाम बलाहक है चौथे पर्वत को द्रोण कहते हैं। यहां मृत संजीवनी और बलिदायिनी औषधियां हैं। पांचवे पर्वत को कंक कहा गया है। छटा मेघ की भांति वाला 'महष' नामक पर्वत है यहां महिष नाम के अग्नि निवास करते हैं। सातवां 'कुकु ज्ञान' रत्न मय पर्वत है। यहां प्रथम वार प्रजापति द्वारा प्रजा उत्पन्न करने पर वासव स्वयं वर्षा करते हैं। यहां के सात देशों के नाम है कुमद का श्वेत देश, उन्नत का लोहित, बलाहक का जीमूत, द्रोणका हरित, कंक का वैद्युत, महिष का मानस और कुमुद का सुप्रभ देश है अब नदियों के नाम सुनिये–पाणितोया, वितृष्णु, चन्द्रा, शुक्रा, विमोचनी और निवृत्ति, ये सात नदियां उन देशों में बहती हैं। इनके पास में सैकड़ों हजारों नदियां बहती हैं। यहां भी प्लक्ष द्वीप की तरह महान शाल्मलि (सेंमर) का वृक्ष है। जिसका तना बहुत मोटा है इसके नाम पर इसे शाल्मल द्वीप कहा गया है यह द्वीप सुरा सागर से चारों ओर से घिरा हुआ है।

हे ब्राह्मणो अब चौथे कुश द्वीप का संक्षेप में वर्णन सुनिये। यह शाल्मली द्वीप से दूना बड़ा है। इसमें पहला विप्रमोच्चय, दूसरा हेम, तीसरा मेघ समान द्युतिमान, चौथा पुष्पवान, पांचवां कशेशय, छटा हरि गिर और सातवां मन्दराचल पर्वत है। जल का एक मन्दा भी है और का भेजन करके यह पर्वत निकला है। इससे इसे मन्दराचल पर्वत कहा गया है। वहां क्रमशः उन्द्विद, वेणुमण्डल, स्वैरथाकार, चौका लवण, धृतमान, प्रभाकर तथा कपिल ये सात देश वहां बसे हैं। यहां पर गौर वर्ण वाले लोग रहते हैं। इनमें चोर और मलेच्छ नहीं रहते हैं यहां भी सात नदियां हैं इनकी अन्यशाखायें भी बहुत सी पवित्र नदी हैं। यह कुश द्वीप घृत सागर से चारों ओर घिरा है।

अब क्रौंच द्वीप का विस्तार सुनिये। यह कुश दीप से दुगना है। यह दीप घृत सागर को चारों ओर से घेरे हुये है। इसका पहला पर्वत

क्रौंच है यह सबसे श्रेष्ठ है। इसके बाद वामनक वामनक के बाद अन्धकारक, अन्धकारक के बाद दिवावृत, दिवावृत के बाद दिविन्द, दिविन्द के बाद पुण्डरीक और पुण्डरीक के बाद दुन्दुभिस्वन नामका पर्वत है। क्रौंच द्वीप के ये सातों पर्वत रत्नमय हैं। इन पर अनेक फल फूल वाले वृक्ष और लतायें हैं। इन पर्वतों के बीच भूमि क्रमशः दुगनी है यहां देशों के नाम इस प्रकार हैं–क्रौंचका कुशल देश, वामन का मनोनुग, मनोनुगा के बाद तीसरा उष्ण देश, उष्ण देश के बाद प्रवारक, प्रवारक के बाद अन्धकारक, इसके बाद मुनि देश, तथा फिर दुन्दुभिस्वन देश है। ये देश सिद्ध चारणों के निवास स्थान हैं वहां के निवासी गौर वर्ण के हैं इन सात देशों में गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा ख्याति और पुण्डरीका ये सातों नदियां बहती हैं। इन नदियों के समीप में बहने वाली और भी कितनी अधिक जलवाली बड़ी २ नदियां हैं, जो समुद्र से जाकर मिलती हैं। यह दधिमण्डोदक समुद्र से घिरा हुआ है जो क्रौंच द्वीप के बराबर है। यह वर्णन मैंने इन द्वीपों का संक्षेप में कीया सविस्तार वर्णन तो इनका सौ वर्षों में भी नहीं हो सकता है।

अब आप लोग शाक द्वीप का यथार्थ वर्णन सुनिये यह क्रौंच द्वीप से दूना बड़ा है। यह दधिमण्डोदक समुद्र को चारों ओर से घेरे हुए है यहां के रहने वाले निवासी पवित्र, स्वस्थ, चिरायु और रोग शोक से रहित हैं। यहां भी मेरु, उदय, जलधार, रैवततक, श्याम, अस्तगिर, अम्बिकेय पर्वत, रम्य पर्वत है, इसे लोग केशरी भी कहते हैं। वायु यहीं से बहा करती है यहां प्रदेशों का भी वर्णन सुनिये जिनके क्रम से निम्नलिखित नाम हैं–जलद सुकुमार, रैवतक का कौमार, मणीचक्र, कुसुमोत्तर प्रदेश, मोदाक और महाद्रुम वर्ष या देश हैं इस के मध्य में एक वनस्पति है जिसका नाम शाक है। यहां चारों वर्णों के लोग रहते हैं यहां भी सातों देशों की सात नदियां हैं जिनके नाम क्रमशः हैं–गंगा या अनुतप्ता, कुमारी या सिद्धा तीसरी नन्दा या पार्वती, चौथी है शिवेतिका या त्रिदिवा, इक्षु या ऋतु, छटी धेनुका

और मृता। ये सप्त गंगा नामक नदियां वहां प्रति देश में कल्याण कारक जल को धारण करती हुई बहती हैं इसमें से अगणित परिमाण वाले जल को धारण करती हुई सहस्रों नदियां बहती हैं। ये सभी श्रेष्ठ और पवित्र हैं इनका वर्णन नहीं किया जा सकता है। हे शांशपायनजी! नदियों से घिरा हुआ तथा मेघ के समान पर्वतों से घिरा यह विस्तीर्ण द्वीप चक्र की तरह स्थित है। अनेक धातु, मणि, विद्रुम और समृद्धपुरों तथा देशों आदि से सम्पन्न इस शाक द्वीप को क्षीर सागर ने चारों ओर से घेर लिया है। यहां लोग वर्णाश्रम धर्म का पालन करने वाले हैं यहां व्यभिचार का नाम भी नहीं हैं अतः कोई भी मनुष्य वर्णाश्रम धर्म से हीन तथा वर्णसंकर नहीं हैं। उन्हें न कोई दण्ड देता है। तथा न वहां कोई दण्ड देने ही वाला है। वे सब धर्म जानते हैं अतः वे आचार विचार के द्वारा एक दूसरे की रक्षा करते हैं।

अब जो सातवां पुष्कर द्वीप है उसका वर्णन करूँगा सो सुनिये क्षीर सागर के चारों तरफ पुष्कर व्दीप घिरा हुआ है। यह शाक व्दीप से दुगना बड़ा है इस व्दीप में एक महान महाशिल नामका पर्वत है उस विशाल पर्वत के ऊँचे २ शिखर मणियों से चित्रित हैं इस देश के पूर्वी भाग में एक विचित्र चोटी स्थिति है। उसका विस्तार पच्चीस हजार योजन तक फैला हुआ है और उसकी ऊँचाई चौंतीस हजार योजन तक है व्दीपार्द्ध के परिमाण के समान एक उत्तम पर्वत है। वह मानस पर्वत कहलाता है यह नवीन चन्द्रमा की तरह वर्तमान है। इसकी ऊँचाई पच्चास हजार योजन की है और इसका विस्तार भी उतना ही है। इस व्दीप के अर्द्धभाग में एक मानस नामका पर्वत है, इसके एक विशाल काय शिखर है वह देश भेद से दो भागों में बंटा हुआ है इसके चारों तरफ मीठे जल का समुद्र है। पुष्कर व्दीप के समान ही इसका विस्तार है। इस द्वीप में दो देश हैं जिनके पवित्र और शुभ कारक नाम हैं ये दोनों देश मानस पर्वतके निचले भागमें मण्ड़लाकार हैं। मानस पर्वत के बाहर जो देश हैं वहा महावीत कहे गये हैं भीतरी देश धातुकी नामसे प्रसिद्ध हैं वहां लोगों की आयु दसहजार वर्ष की होती है।

वहां के मनुष्यों को सिद्धि प्राप्त होती है। वहां के सभी मनुष्य निरोग और स्वस्थ होते हैं। दोनों देशों के मनुष्यों की आयु तथा रूप में एक ही के समान होते हैं। पुष्कर द्वीप के दोनों देशों में सच, झूठ, धर्म, अधर्म, पशुपालन, क्रय विक्रय, वर्णाश्रम विषयक बात, सेवावृत्ति और बुरेवचन या शस्त्रका प्रयोग करने की समस्या नहीं है वहां का काल हर समय उत्तर कुरु की तरफ रहता है। वहां न नदी है, न झरने, न किसी प्रकार के सरोवर हैं। वहां न कभी वर्षा होती है न गर्मी सर्दी पड़ती है। वहां के मनुष्यों में न थकावट आती है न बुढ़ापा आता है वे हर समय युवक ही बने रहते हैं। हमने आपसे पुष्कर द्वीप के दोनों महावीत और धातकी खण्ड का वर्णन किया है।

यह पुष्कर सागर दीध सागर से चारों तरफ घिरा हुआ है। पुष्कर द्वीप के विस्तार और घेरे की तरह ही इसका विस्तार और घेरा है अतः इस तरह सातों द्वीप सात समुद्र से घिरे हुए हैं जो द्वीप समुद्र से घिरे हुये हैं, वे उसी के बराबर हैं। जल की वृद्धि होने के कारण ही सागरों का समुद्र नाम पड़ा है चारों वर्ण की प्रजा और ऋषियों को देश में रहने के कारण ही देश को वर्ष कहते हैं। जिस प्रकार ऋष् धातु से ऋषि शब्द बना है उसी तरह वृष् धातु से वर्ष शब्द बना है। शुक्ल पक्ष में जिस तरह चन्द्रमा बढ़ता है उसी तरह समुद्र का जल बढ़ता है। कृष्णपक्ष के चन्द्रमा की तरह ही समुद्र का जल घटता है। पर्वों के समय में समुद्र का जल एक सौ पन्द्रह अंगुल तक बढ़कर घटता है। दोनों तरफ जल बहने के कारण और सभी तरफ जल से घिरे रहने के कारण द्वीपों का नाम द्वीप पड़ा है समुद्र में जिस कारण जल रहता है इसीलिए उसे उदधि कहा जात हैं। बिना पर्व गांठ वाले गिरि कहे जाते हैं और पर्व वाले को पर्वत कहते हैं।

शाल्मल द्वीप में शाल्मलि नामका जो महान वृक्ष है वह पूज्यनीय है। कुशद्वीप में कुशनामका एक तृण है, अतः इसी के नाम पर उस द्वीप का कुशद्वीप नाप पड़ा है क्रौंच द्वीप के मध्यदेश में क्रौंच नामका पहाड़ है। शाकद्वीप में शाक नामका वृक्ष है इसी कारण वह शाक

द्वीप कहलाता है। पुष्कर द्वीप में एक वट का वृक्ष है। उस वृक्ष की सब लोग पूजा करते हैं। यहां पर भगवान शंकरजी की तथा ब्रह्मा जी की पूजा होती है। वहां पर साध्यों के साथ में ब्रह्माजी रहते हैं और तैंतीस महर्षियों के साथ देवता लोग उन की पूजा किया करते हैं।

जम्बूद्वीप में तरह तरह के रत्न पैदा होते हैं। पुष्कर द्वीप के दोनों देशों के मनुष्यों की रक्षा स्वयं आप ही वे मनुष्य करते हैं। प्रजापति ब्रह्माजी स्वयं भगवान विष्णुजी, शिवजी तथा सूर्य और पितरों के साथ दण्डविधान से वहाँ का शासन करते हैं।

पुष्कर द्वीप से आगे एक बहुत बड़ कांचनपुरी है। कांचनपुरी की पृथ्वी एक शिला की तरह समान और घनी बसी हुई है। इसके आगे सीमान्त में एक पर्वत है पर्वत के आगे एक मण्डल है। मण्डल से आगे लोकालोक है लोकालोक के बाद एक दिशा की तरफ प्रकाश है और दूसरी दिशा की तरफ अन्धकार है। पूरब की तरफ प्रकाश है और पश्चिम की तरफ अन्धकारमय है। इसकी ऊँचाई दस हजार योजन की है आलोक शब्द से ही लोक शब्द बना है। जिस भाग में अन्धकार है उसकी तरफ भी कुछ प्रकाश है प्रकाश को ही आलोक कहते हैं आलोक के कारण लोक हुआ है। अन्धकार बाहर है। बाहर भी जहां तक आलोक है वहां तक लोकों का विस्तार है। इसके बाद जल से सब ढक गया है निरालोक के बाद जो लोक है वह अण्ड लोक मण्डल से ब्रह्माजी भी ढके हुये हैं। अण्ड के बीच में सातों द्वीपों वाली पृथ्वी स्थिति है। इन लोकों के अतिरिक्त और भी बहुत लोक हैं–जैसे भुर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्य लोक इत्यादि हैं।

जिस तरह शुक्ल पक्ष की पड़वा के दिन चन्द्रमा पश्चिम दिशा की तरफ कुम्भ स्थाई होकर रहते हैं उसी तरह अण्ड का शरीर है। इस तरह के हजारों करोड़ों अण्ड हैं। ये अव्यात्मा के कारण ऊपर नीचे और बीच में स्थित हैं ये अलग अलग सात-सात प्रकृत कारणों से ढका हुआ है। इनमें एक दूसरे से दस गुने बड़े हैं और हर एक दूसरे

से मिले हुए हैं। सरिता, पहाड़ तथा जंगल आदि के बीच में गोलोक धाम स्थित है। जिस प्रकार कमल में कर्णिका हुआ करती है उसी तरह उपरोक्त सरिता और पहाड़ के मध्य में मनको हरने वाला धाम शोभित है। वहीं पर छै पल स्वर्ण का निर्मित एक पात्र है जो ४ अंगुल गहरा है जिसमें एक-एक माशे स्वर्ण के बने चार-चार अंगुल लम्बे चार कीलों से छिद्र किये जांय तथा उस पात्र को जल के ऊपर रखा जाय तो उन छेदों से जल आकर जितने समय में वह पात्र भरदे, उतने समय का एक दण्ड हुआ करता है। इस तरह मैंने आपको महान यश देने वाला यह सप्तद्वीपों का आख्यान वर्णन कर दिया।
इति श्री महावायुपुराण का भुवन-विन्यास नामक ४६ आध्याय समाप्त।

पचासवां अध्याय

(भुवन-विन्यास)

ऋषियों ने इस प्रकार सूत जी से आनन्द दायक वाणी सुनकर और कुछ सुनने की इच्छा व्यक्त की। और सूत जी से सादर पूछने लगे।

सूत जी बोले–हे ब्राह्मणो आप लोगों को अब मैं दानव और राक्षस, देव, किन्नरों आदि के विनास स्थानों का वर्णन करूंगा। सो आप ध्यना मग्न होकर श्रवण कीजिये।

समस्त विश्वों के ऊर्ध्व भाग में गोलोक स्थित है, जो कि नभ के समान फैला है। श्रीकृष्ण की दया से वह सदा नित्य अण्ड के रूप में प्रकाशित रहता है। हे राजन्! जब श्रीकृष्ण भगवान कला स्वरूप प्रकृति के साथ क्रीड़ा परायण होकर थकान की अनुभूति करने लगे तो उनके मुख से पसीने की बूँदें के जल से गोलोक धाम जल से भर गया। महा विष्णु का आधार गोलोक धाम में ही है। जल शय्या पर शयन करने वाले जो महा विराट हैं वे भगवान श्रीकृष्ण का सोलहवां अंश हैं।

उन श्रीकृष्ण के अंगों की शोभा दूर्वादल के सदृश्य श्याम है। उनके मुँह पर मुस्कराहट खेलती रहती है। वे चतुर्भुजाधारी हैं।

वे वनमाला धारण किये हैं। पीताम्बर ओढ़े हैं। आकाश में उनका नित्य वैकुण्ठ धाम हैं। ईश्वर की इच्छा से उसका प्राकट्य हुआ है।

वह आकाश के सदृश्य फैला हुआ और मूल्यवान सुन्दर रत्नों से बना है वहीं नारायण देव निवास करते हैं। भक्तों पर कृपा करने के निमित्त ही श्रीकृष्ण भगवान दो स्वरूपों में प्रकटे हैं—दो भुजाधारी तथा चार भुजाधरी। चार भुजाओं से वे वैकुण्ठ में निवास करते हैं और दो भुजाओं से गोलोक धाम में। वैकुण्ठ से पचास कोटि योजन गोलाकार 'गोलोक धाम' स्थित है जो सब लोकों से श्रेष्ठतम है। बहुमूल्य रत्नों द्वारा निर्मित विशाल भवन उस धाम का कान्ति में वृद्धि करते हैं। वह भवन रत्नेन्द्रसार के बने अनोखे खम्भों और सीढ़ियों से सुशोभित हैं। सुन्दर मार्ग निर्मित दर्पणों से जड़े कपाट और कलशों से शोभित तथा नाना प्रकार के चित्रों से शिविर उसकी शोभा में वृद्धि करते रहते हैं। वह एक करोड़ योजन विस्तार वाला है। उसकी लम्बाई सौ करीड़ योजन है। उसका परकोटा विरजा नदी से घिरा हुआ शतशृङ्ग पहाड़ है।

विरजा सरिता की आधी लम्बाई, चौड़ाई और शतशृंग पहाड़ की आधी ऊँचाई वाले वृन्दावन से वह धाम शोभायमान है। वृन्दावन की अपेक्षाकृत अर्ध लम्बाई चौड़ाई में बना रास-मंडल गोलोक धाम का आभूषण है। सम्पूर्ण जीव अपने कर्मों के अनुसार अपने कर्मों का फल भोगते हैं, क्यों कि जो भी शुभ या अशुभ कर्म हुआ करता है, उसका नाश कोटि कल्पों में भी नहीं हुआ करता। कर्मों के अनुसार जीव ब्रह्मा, इन्द्र तथा सूर्य के भवन में जन्मा करता है। कर्म द्वारा ही जीव मनुज के घर में और कर्म द्वारा ही पशु इत्यादि योनियों में जन्मता है। कर्मों के कारण ही जीव नर्क में प्रस्थान करता है और कर्म से ही उसको बैकुण्ठ मिलता है। अपने कर्मों के अनुसार ही जीव चक्रवती राजा बन जाता है तथा स्वकर्म से ही वह नौकर बनता है। हे जगदम्बे! कर्म से ही जीव सुन्दर हुआ करता है और अपने कर्मों द्वारा ही वह सदा रोगी बना रहता है। विरजा के आस पास दो प्रदेश हैं

इनमें प्रथम के निम्नदेश में भंयकर शब्द करने वाले इन्द्र के शत्रु नमुचि का निवास स्थान और मन्दिर हैं। इस कृष्ण वर्ण के देश में शंकुकर्ण का पुर, कबन्ध का मन्दिर, प्रसन्न जनों से युक्त निष्कुलाद का पुर है यहीं भीमराक्षस और शूलदन्त का भी पुर है। इसके अलावा लोहितांक्ष, कलिंग, स्वापद, धन्नंजय, महात्मा महेन्द्र, कालियनाग और कलस आदि अनेक नाग, दानव और राक्षसों के सहस्रों नगर हैं। हयग्रीव, कृष्ण, निकुम्भ शँख, गोमुख, नीलराक्षस, मेघ, कुथन, कुकुराद, महोष्णीश कम्बलनाग, अश्वतर, कद्रु पुत्र महात्मा तक्षक आदि नाग, दानव व राक्षसों को दूसरे पाण्डुभौम तल में निवास ग्रह और नगर हैं। इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है। तीसरे तल में महात्मा प्रहलाद और दैत्येन्द्र अनुह्लाद का पुर है। यहीं तारक, त्रिशरा, शिशुमार, च्यवन खर, राक्षसेन्द्र कुम्भिल के भी मन्दिर और नगर हैं। यहां विराध, क्रूर, हेमक आदि नाग भी हैं। यहां मणिमन्त्र का पुर कपिल का मन्दिर तथा उरगपतिनन्द और विशाल के भी मन्दिर हैं।

चौथे तल में दैत्यसिंह महात्मा कालनेमिका गजकर्ण तथा कुंजर नाम के नगर हैं। जहां पर सुमालि का एक विस्तृत पुर और लोकनाथ मुंज और वृकवक्त्र के स्थान हैं। यही पर वैनतेयगरुड़ जी का हजारों योजन लम्बा चौड़ा एक नगर है जो पक्षियों से भरा हुआ है। पाचवें में दैत्यराज विरोचन का नगर है। जो अनेक योजन विस्तार वाला शर्करा के रंग की सी भूमि वाला है यहीं वैदूर्य, अग्निजिह्व आदि दैत्यराजों के भी पुर हैं। यहीं पर कर्मार, स्वस्तिक और जय नामक नाग भी यहीं रहते हैं। छटवें तल में दैत्यराज के सरि का उत्तम नगर है। वहां सुपर्वा, पुलोमा तथा महिष के नगर और उत्कोश राक्षस का नगर है शतशीर्ष और सुरसापुत्र वहां सुख पूर्वक रहा करते हैं। यह छटा शिला भौम नामक रसातल है सबके पश्चिम में सातवां रसातलहै जिसको पाताल करते हैं। यहां बलि का नर नारियों से युक्त आनन्दमय नगर हैं। यह असुर और नागों से युक्त है। यहीं पर मुचुकुन्द दैत्य का महान नगर है यह पाताल दिति के फूलों

के अनेकानेक विशाल भवनों से भरा पड़ा है। हे ब्राह्मणो! बहुत विस्तृत पाताल के अन्त में सर्पगण निवास करते हैं। ये महात्मा कुण्डली लाल कमल की तरह आंख वाले अजर अमर, धौत शंख के समान, नील वस्त्र धारण करने वाले, और विचित्र माला को धारण करने वाले हैं। ये कान्तिमान, विशाल भुजा और शरीर वाले हैं। ये नागराज अग्नि की तरह अनगिनत जिह्वाओं से ज्वाला को फेंकते रहते हैं जिससे यह कैलाश की भांति दीखते हैं सभी नागों के राजा महाद्युतिमान शेष भगवान हैं। यह भगवान विष्णु का ही शेष रूपी शरीर है जो पृथ्वी की सीमा पर स्थित है। देव असुर, नाग, महानाग और राक्षसों से युक्त इन सात रसातलों का यह वर्णन मैंने किया। इससे आगे के स्थान अगम्य हैं। तथा वे आगे से न तो सिद्धों द्वारा देखे ही गये हैं और देवता लोग ही उन्हें जान पाये हैं हे ब्राह्मणो! महर्षि लोग पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश का महत्व इसी प्रकार वर्णन करते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

अब हम सूर्य और चन्द्रमा की गति वर्णन करेंगे। ये चन्द्र और सूर्य अपने मण्डल में सदा स्थिर रहकर घूमते रहते हैं और अपनी प्रभा से प्रकाश किया करते हैं। सातों समुद्रों और द्वीपों का वही विस्तार है जो पृथ्वी का है। चन्द्र, सूर्य वहिर्भागस्थ परिधि में प्रकाश करते हैं। यह आकाश मण्डल भूमि के परिधि परिमाण के बराबर है।

प्रकाश वाचक 'अब' धातु से प्रकाश करने के कारण 'रवि' शब्द बनता है। इस भारतवर्ष में 'यही शब्द महितत्वात्' अर्थात् पूज्यत्व के कारण निपातन से सिद्ध हुआ है। भारतवर्ष का विस्तार सूर्य के विस्तृत मण्डल के समान है सूर्य का विस्तार नौ हजार योजन है। इस विस्तार से सूर्य मन्डल की विशालता तीनगुनी अधिक है चन्द्र मन्डल का विस्तार सूर्य से दुगना है। अब हम सात द्वीपों वाली पृथ्वी का परिमाण कहेंगे, मेरुमध्य के चारों ओर इस सम्पूर्ण पृथ्वी का विस्तार पचास करोड़ योजन है। पृथ्वी का बांध विस्तार एक करोड़ पचास हजार नवासी योजन है। चारों दिशाओं में पृथ्वी का विस्तार तीन

अरब एक करोड़ योजन है। जिनमें समुद्र तथा पर्वत २५ करोड़ १० लाख योजन घेरे हुये हैं। वह लोकालोक पर्वत तक फैलते हैं इसके बाद निरालोक है। जिसकी गणना नहीं की जासती। एक बार संध्या काल में दुरात्मा राक्षसों ने सूर्य को खा जाना चाहा परन्तु प्रजापति ने उन्हें मार दिया। उस समय उनकी केवल तात्कालिक मृत्यु हुई परन्तु शरीर सदा के लिये अक्षय हो गये। ये राक्षस मन्देह कहलाते है जो संख्या में तीन करोड़ हैं। ये दुरात्मा प्रतिदिन उदय काल में सूर्य को खा जाना चाहते हैं। और कष्ट देते हैं। तब सूर्य का और उन रक्षसों का घनघोर युद्ध होता है। ब्रह्मणों के साथ देवता और ब्रह्माजी उस समय संध्या की उपासना करते हैं। तब वे गायत्री तथा ओंकार से अभिमन्त्रित जल प्रदान करते हैं। उस वज्र के सामन तेजस्वी जलसे दैत्य लोग जल्म जाते हैं। ब्राह्मण लोग सर्वत्र अग्निहोत्र करते हैं और आहुति प्रदान करते हैं। इसके बाद ब्रह्मा मरीचि तथा बालखिल्यों के साथ अपने स्थान को लौट जाते हैं।

पन्द्रह निमिषों की काष्ठा, तीस काष्ठा की कला, तीस कला कला का मुहूर्त और तीस मुहूर्तों का एक दिन-रात होता है। भाग के अनुसार दिवसों का यथा क्रम वृद्धि और ह्रास होता रहता है। किन्तु संध्या का परिमाण सदा एक मुहूर्त रहता है। जब सूर्य उदय होकर अपनी रेखा पर तीन मुहूर्त तक चल लेते हैं तो वह वह उतना समय प्रातस्तान कहलाता है। प्रातस्तन के बाद तीन मुहूर्त तक संगव काल होता है। फिर तीन महूर्त तक मध्यान्हकाल और मध्याह के बाद तीन महूर्त तक अपराह्न और इसके बाद सायाह्न काल होता है। जो तीन मुहर्त तक रहता है। जब सूर्य विषवतरेखा पर आते हैं तब १५ मुहूर्त की रात होती है। सूर्य के दक्षिणायन और उत्तरायण होने पर रात दिन घटते बढ़ते हैं। शरद व वसन्त काल में सूर्य विषवत रेखा पर आजाते है उस समय दिन रात बराबर होते हैं।

पन्द्रह दिन का एक पक्ष, दो पक्षों का एक मास, दो मास की एक ऋतु, तीन ऋतुओं का एक अयन और दो अयन का एक संवत्सर

होता है। संवत्सरादि पांच प्रकार के हैं। पहला संवत्सर, दूसरा परिवत्सर, तीसरा इद्वत्सर चौथा अनुवत्सर और पांचवां वत्सर। सौरे, सौम्य, नाक्षत्र और सावन नामक चार प्रकार के मान सभी पुराणों में कहे गये हैं।

श्वेत पर्वत के उत्तर शृङ्गवान नाम विख्यात है। इसका विस्तार तथा विष्कम्भ पूर्व में बताया जा चुका है इसके तीन गगन चुम्बी शृंग हैं। प्रथम और तीसरा चांदी के तथा मध्य का सोने का शृंग है। यह विषवत रेखा के पास है। शरद एवं वसन्त में भगवान भास्कर उस पर्वत पर अवलम्बन करते हैं। अनुमति और राका दो पूर्णिमा और सिकीवाली और कुहू नामक दो अमावस्या होती है। माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ उत्तरायण एवं श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष पौष दक्षिणायन है। इन्हीं बारह महिनों का एक वत्सर होता है ऋतुयें इन्ही से उत्पन्त हुई हैं। मानव को विषव रहस्य को जानकर देव पितृ कार्य करने चाहिये। नागवीथी के उत्तर और सप्तर्षि के दक्षिण एवं सविता के उत्तर जो मार्ग है, वह देवयान कहलाता है। यहां निवास करने वाले विमल, सिद्ध ब्रह्मचारी गृहस्थ धर्म को सदा हेय मानते हैं। इससे वे मृत्युंजय हैं। इसके बाद ऊर्ध्वरेता ८८ हजार ऋषि हैं जो सूर्य के उत्तर पथ में प्रलय काल तक वास करते हैं। ये लोक व्यवहार से रहित हैं तथा ये मैथुन आदि नहीं करते। शव्यादि दोष का भी दर्शन नहीं करते। इस कारण से इन्होंने अमरत्व प्राप्त किया है। प्रलय काल तक जीवित रहते हैं। सप्तर्षि मण्डल से ऊपर ध्रुव प्रदेश है जो विष्णु पद कहलाता है। यह आकाश में दिव्य और प्रकाशवान तीसरा पदार्थ है यहां पर किसी को कोई चिन्ता नहीं सताती। यह भगवान विष्णु का परमपद है। लोक साधक ध्रुव आदि इसी विष्णुपद के सहारे ठहरे हुये हैं। भगवान भास्कर रात्रि के संतप्त प्राणियों तथा चर-अचर की जीवन ज्योति में बल प्रदान करने के लिये प्रातःकाल अपनी नव-निर्मित शीतल रश्मियों से जगत में प्रकाश फैलाने हेतु भ्रमण करते हैं।

और मध्यान्ह में हर किसी को तपाते हैं। सूर्य निकलने से दोपहर तक अपनी किरणों को बढ़ाते हैं और दोपहर के बाद अस्त होने तक सूर्य अपनी किरणों को धीरे २ कम करते हुए अस्त हो जाते हैं। उदय और अस्त होने से ही पूर्व पश्चिम दिशा मालूम हो जाती है। सूर्य जिस तरह आगे तपते हैं, उसी तरह पीछे दोनों भागों में जहां सूर्य निकलते हुए दीखते हैं। वही उदयाचल कहलाता है और जहां वे छिप जाते हैं वहीं अस्ताचल कहलाता है। सबके उत्तर में मेरु है और दक्षिण में लोकालोक है। सूर्य की किरणें रात को नहीं दीखती हैं। ग्रह, नक्षत्र, तारा, और सूर्य के दर्शन तथा अस्त होना ऊँचे से ही जाने जाते हैं। अग्नि और जल की छाया शुक्ल वर्ण की होती है पृथ्वी की छाया कृष्ण वर्ण की होती है सूर्य की गर्मी कम होने के कारण वे लोहित वर्ण के होते जाते हैं। सूर्य के अस्त होने पर उनकी किरणें का एक भाग अग्नि में मिलजाता है इसी से अग्नि रात में बहुत दूर से मालूम पड़ती है और जब सूर्य का उदय होता है, तब उनके अस्तकालीन तेज के साथ अग्नि का तेज भी सूर्य में मिल जाता है अतः इसी कारण सूर्य देव दिन में अधिक तपते हैं। सूर्य का प्रकाश मान तेज और अग्नि का उष्ण तेज आपस में मिलकर सारे पृथ्वी के मनुष्यों के दिन रात को सतुंष्ट करते हैं सूर्य के प्रकाश से युक्त दिन है और रात्रि अन्धकारमयी है। अतः इसीलिए सूर्य के उदय और अस्त से ही दिन रात की व्यवस्था होती है और जब इस प्रकार सूर्य पुष्कर के बीच घूमते हैं तो पृथ्वी के तीन अंश को वे इस मुहुर्त में ही पार कर जाते हैं अब मैं यह बताऊँगा कि सूर्य एक मुहुर्त में कितने योजन चलते हैं।

सूर्य प्रति मुहुर्त में एक्कतीस लाख पचास हजार योजन चलते हैं। जब सूर्य इस चाल से दक्षिण दिशा में जाते हैं, तब वे उस दिशा में माघ महीने तक वहीं रहते हैं। अब मैं आपसे उनकी दक्षिण दिशा की चाल का वर्णन करूँगा।

सूर्य देव इस दिशा में एक दिन और रात में नौ करोड़ पैंतालीस हजार योजन चलते हैं। क्षीरोद समुद्र के उत्तर में उदित होकर जब

वह आगे चलते हैं तो उनके सामने के लोक में दिन और पीठ पीछे रात्रि है। इस प्रकार सूर्य देव का क्रम प्रति दिन चलता रहता है।

इति श्री वायु महापुराण का ज्योतिष्प्रचार नामक ५०वां अध्याय समाप्त

इक्यावनवाँ अध्याय

(ज्योतिष्प्रचार)

स्वायंभुव मन्वन्तर के वर्णन-प्रसंग में भूतकालीन वृत्तांत कह चुके हैं अब भविष्य की बातों का विवरण सुनाते हैं। यह सुनकर मुनियों ने लोम हर्षण सूत जी से पूछा कि सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों की गति किस प्रकार की होती है।

यह ज्योतिष्चक्र गगनमंडल में किस प्रकार घूमता है। व्यूहाकार टेढ़ा मेढ़ा घूमता हुआ भी आपस में टकराते नहीं हैं। इसे कौन घुमाता है। इसे जानने की इच्छा सब करते हैं। हे सूत जी आप यह सब हमको कथा सुनावें क्योंकि यह जीवों को भ्रम में डाल देने वाली है।

सूतजी बोले—अब मैं जीवों को आश्चर्य चकित करने वाली कथा को सुनाता हूँ, सो सुनो। यह ज्योतिष्चक्र दीखते रहते हैं परन्तु फिर भी जानने में न आने से भ्रम पैदा करते हैं। सौरमण्डल के पुच्छभाग में उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव केन्द्र के रूप में विद्यमान है। वे स्वयं घूमते हैं तथा अन्यग्रहों के साथ सूर्य चन्द्र को भी घुमाते है। सभी ग्रह चक्र ध्रुव का अनुसरण करता है। ध्रुव के अनुकूल ही सूर्य चन्द्र, तारा, नक्षत्र, ग्रह नक्षत्र आदि मण्डल घूमा करते हैं। वायु समूह के बन्धन द्वारा यह नक्षत्र मण्डल ध्रुव में बँधा हुआ है। उनका योग, भेद कालाचर, अस्त-उदय, उत्पात दक्षिणोत्तर अयन, विषुव, और ग्रहवर्ण ध्रुव से ही उत्पन्न होते हैं। वर्षा, धूप, वर्फ, रात दिन और संध्या तथा प्रजाजन का शुभाशुभ व्यापार ध्रुव से ही उत्पन्न होते हैं। सभी नक्षत्र ध्रुव के ही अधिकार में हैं। केवल सूर्य उन्हें ढके रहते हैं। दिवाकर भगवान ही विश्वेश लोककर्ता, सहस्रांशु, प्रजापति, सम्पूर्ण, लोकों के धारणकर्ता प्रभु और विष्णु हैं। सार्वलौकिक जल सोममण्डल में ही द्रवीभूत हुआ है। अतः सम्पूर्ण

जगत चन्द्रमा के ही द्वारा प्रतिष्ठित है। यह हमने यथार्थ बात कही है। सूर्य से ताप और चन्द्रमा से शीतलता निकलती है। यही शीत उष्ण तत्व पृथ्वी को धारण करते हैं। पवित्र और निर्मल जल वाली गंगा नदी का आधार भी चन्द्र है। हे विप्रो! सभी महानदियां चन्द्र पुत्र की पुरोवर्तिनी हैं। सभी जीव जन्तुओं के शरीर में जल है। अतः जंगम स्थावर सभी में मरने के बाद जलाने पर जल भाप बनकर निकलता है। उससे मेघ बनते हैं। जो जल के आधार स्थान है। सूर्य का तेज किरण जाल द्वारा जीव जन्तुओं से जल ग्रहण कर लेता है। समुद्र के जल को भी वायुवेग के द्वारा खींचता है। सूर्य देव ऋतु के बदलने पर स्वयं भी नवीनता धारण करते हैं। और मेघों को जल देते है। तब वायु उसे वेग द्वारा चारों ओर बरसाते हैं। 'मिहा' धातु क्षरणार्थक होती है इसी से 'मेघ' शब्द निष्पन्न हुआ है। जिससे जल भ्रष्ट न हो उसको विद्वान लोग अभ्र कहते हैं। आग्नेय, ब्रह्मज और पद्मज नाम से मेघ तीन प्रकार के हैं। ये मेघ भैंस सूअर या मतवाले हाथी के रूप के समान पृथ्वी पर उतरते हैं और चक्कर लगाते हैं। जो बिजली नहीं चमकाते और अधिक देर तक बरसते है उन्हें जीमूत कहते हैं जो जीवजन्तुओं को बढ़ावा देते हैं। ब्रह्म के निःश्वास से उत्पन्न मेघों का नाम है ब्रह्मज। ये गरते कौंधते हैं और इनका गर्जन बड़ा भला जान पड़ता है। इनके शब्दों को सुनकर भूमि इस प्रकार पुलकित हो जाती है जैसे राज्याभिषेक होने से रानी पुलकित होकर नवीन यौवन सुख का अनुभव करती है। चराचर जगत के लिये पृथ्वी इन मेघों से प्रेम करती है। पुष्करावर्तक आदि मेघ पद्म सम्भव हैं। पूर्व काल में चराचर का कल्याण चाहने वाले इन्द्रने महाबलशाली, विशाल काय और इच्छानुरूप गमन करने वाले पर्वतों का पक्ष काट दिया था। ये ही विशाल पक्ष जलपूर्ण होकर मेघाकार हो गये। इनका नाम हुआ पुष्कर। इसी कारण वे पुष्करावर्तक नाम से प्रसिद्ध हैं। तीसर मेघ कल्प के अन्त में वर्षा किया करते हैं। और महान वर्षा करके पृथ्वी मण्डल को परिपूर्ण

करदेते हैं। चार मुँह वाले ब्रह्मा जिस अण्डकपाल से उत्पन्न हुये हैं उसीसे मेघ उत्पन्न हुये हैं।

सभी मेघों में पर्जन्य श्रेष्ठ हैं और दिग्गज चतुष्टय। गज, पर्वत मेघ, और सांप सभी का उत्पत्ति स्थान जल है अतः ये अलग होने पर भी एक हैं। हेमन्त में धानों की वृद्धि के लिये दिग्गज और पर्जन्य तुषार की वृष्टि किया करते हैं। परिवह वायु भगवान इनके आश्रम स्थान हैं। हेमकूट पर्वत के पास पुण्ड्र नामक नगर में तुषार की ही वर्षा होती है। उस तुषार को आवह नामक वायु अपनी सामर्थ के अनुसार बटोर लेती है। और हिमालय से महागिर तक उसे वर्षा देती है। अन्य देशों में ऐसी वर्षा नहीं होती है। मेघ और उनकी वृद्धि-वृत्तान्त इस प्रकार कहा गया किन्तु वृष्टि तो असल में सूर्य ही करते हैं ऐसा कहते हैं। वायु सूर्य ग्रह से निकल कर सम्पूर्ण नक्षत्र मण्डल में घूमकर दिन के अन्त में पुनः ध्रुव द्वारा घिरे सूर्य में ही प्रवेश कर जाते हैं।

अब सूर्य के रथ का संनिवेश सुनिये। इस रथ में एक चक्का, पांच अरे और तीन नभियां है। सूर्य भगवान इस तेजोमय रथ के चक्र से अधंकार को नष्ट करते हुये गमन करते हैं। इस रथ का विस्तार दश हजार योजन है। सूर्य के लिये ब्रह्माजी ने इसे प्रयोजन वश निर्माण किया। यह रथ असंग, सुवर्णमय, दिव्य और परम वेगगामी अश्वों से युक्त हैं। यह घोड़े छन्द स्वरूप हैं जहां शुक्र हैं वहां ठहरता है। इसकी उपमा वरुण के रथ के समान दी जा सकती है। सूर्य रथ के जितने अवयव हैं वे संवत्सर के अंगों से कल्पित हैं। सूर्य के रथ की मध्य का स्थान नाभि है जिसे दिन कहते हैं। यही एक चक्र भी कहलाता है। पांच ऋतु अरायें और छटी नेमि कहलाती है। गायत्री, त्रिष्टुप, अनुष्टुप आदि सात घोड़े सातों छन्द हैं। दोनों अयन दोनों जुये हैं मुहूर्त वन्धुर, कला युगकील, आदि हैं। रथ के अक्ष में चक्र मिला है और चक्र ध्रुव से मिला है। इससे अक्ष के साथ चक्र घूमता है। और चक्र के साथ २ ध्रुव घूमता